कुरुक्षेत्र

सिंचाई सुविधा : ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधार

वर्ष–36, अंक 5, फाल्गुन-चैत्र 1912

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास विभाग का प्रमुख मासिक

सम्पादक	: राम बोध मिश्र
सहायक सम्पादक	: गुरचरण लाल लूथरा
उप सम्पादक	: राकेश शर्मा

विज्ञापन प्रबंधक	: बैजनाथ राजभर
व्यापार व्यवस्थापक	: जसवंत सिंह
सहायक व्यापार व्यवस्थापक	: शकुन्तला
सहायक उत्पादन अधिकारी	: के. आर. कृष्णन्

आवरण पृष्ठों की

साज सज्जा	: अलका नय्यर
चित्र	: फोटो डिवीजन

एक प्रति : 3.00 रु.
वार्षिक चंदा : 30 रु.

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए। अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

विषय-सूची

उत्तर प्रदेश में सिंचाई सुविधा 2
डा. (कुमारी) नीता बोरा

देश का सच्चा सेवक (कविता) 4
ओम प्रकाश मतवाला

ग्रामीण विकास में सेवा क्षेत्र अवधारणा का महत्व 5
डा. प्रभु दयाल यादव

ग्रामीण विकास में कम्प्यूटर की भूमिका 10
मनीष दवे

भारत के ग्रामीण विकास में बाधायें 12
सूरज सिंह

ग्रामीण औद्योगीकरण 15
मृदुला रानी

मध्यप्रदेश में ग्रामीण विद्युतीकरण के बढ़ते चरण 18
नीलम गुप्ता एवं ए. के. पाण्डेय

राष्ट्र निर्माण में अग्रणी : लाला लाजपतराय 21
प्रस्तुति : राकेश शर्मा

राजस्थान में विकासोन्मुख मत्स्य पालन उद्योग 24
रणछोड़ त्रिपाठी

ग्रामीण विकास का सैद्धान्तिक पक्ष 26
डा. बी. एम. चितलंगी

भारत में महिलाओं की स्थिति : एक अध्ययन 29
हीरा बल्लभ पन्त

पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी असन्तुलन : भविष्य की तबाही 32
के. एस. चौहान

खारे पानी को पेयजल बनाने का अभियान 35
शैलेन्द्र डी. व्यास

आया फागुन (कविता) 36
जहीर कुरेशी

बदलाव (कहानी) 37
डा. सेवा नन्दवाल

लेकर बहार आई होली (कविता) 38
अवधकिशोर सक्सेना

कृषि आधारित खाद्य प्रशोधन उद्योग 39
डा. रोहिणी प्रसाद

होली (कविता) 41
सुलोचना गुप्ता

ग्रामीण विकास में यातायात की भूमिका 43
सरोज बाला

प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी यही हो।

सम्पादकीय पत्र व्यवहार : सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), कृषि मंत्रालय, ग्रामीण विकास विभाग, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें। दूरभाष : 384888

उत्तर प्रदेश में सिंचाई सुविधा

डा. (कुमारी) नीता बोरा

कृषि प्रदेश की अर्थव्यवस्था का मूल आधार है और प्रदेश की अर्थव्यवस्था में 52.7 प्रतिशत इसका हिस्सा है। कृषि का विकास जल स्रोतों के बेहतर उपयोग और उत्तम सिंचाई प्रबन्ध पर निर्भर करता है। प्रदेश में उपलब्ध जल से कुल 257 लाख हैक्टेयर क्षेत्र की सिंचाई की जा सकती है जिसमें 137 लाख हैक्टेयर सतही जल से तथा 120 लाख हैक्टेयर भूमिगत जल से होता है। देश की सम्पूर्ण सिंचन क्षमता में उत्तर प्रदेश का योगदान लगभग 21 प्रतिशत है।

उत्तर प्रदेश में वृहत एवं मध्यम सिंचाई योजनाओं के अन्तर्गत 62,219 किमी. लम्बी नहरों का फैलाव है। लघु सिंचाई योजना में कुल 232 लिफ्ट नहरें कार्यरत हैं। सन् 1988-89 तक बड़ी, मध्यम, सरकारी तथा निजी लघु सिंचाई योजनाओं से 216 लाख हैक्टेयर भूमि को सिंचाई की सुविधा प्राप्त हो चुकी थी। छठी योजना के अन्त तक 188.55 लाख हैक्टेयर सिंचन क्षमता सृजित की गई। पांचवीं योजना में 10.38 लाख हैक्टेयर, छठी योजना में 7.45 लाख हैक्टेयर तथा सातवीं योजना में 6.37 लाख हैक्टेयर अतिरिक्त सिंचन क्षमता सृजित हुई है। इस योजना के दौरान सिंचाई में 1,38,600 करोड़ रुपये व्यय करने का प्रावधान रखा गया। अतः सातवीं योजना में अतिरिक्त सिंचन क्षमता का लक्ष्य कम हो गया है। निम्न तालिका सातवीं योजना के दौरान सिंचाई के लिए प्रस्तावित परिव्यय और सिंचन क्षमता दर्शाती है।

यद्यपि सिंचन क्षमता में आशातीत वृद्धि की जा रही है परन्तु इसके साथ ही सिंचाई की बढ़ती हुई मांग अपने स्थान पर है। इसी लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए प्रदेश में विभिन्न परियोजनाओं के माध्यम से सिंचाई की बढ़ती हुई मांग को पूर्ण करने का प्रयास किया जा रहा है। प्रदेश में 55 मध्यम सिंचाई परियोजनाओं से लगभग 10.04 लाख हैक्टेयर की सिंचाई सुविधा मिली है। साथ ही 21 बहुउद्देशीय सिंचाई परियोजना पर कार्य हो रहा है।

तालिका

वर्ष	प्रस्तावित परिव्यय (करोड़ रु.)	प्रस्तावित सिंचन क्षमता (लाख है.)	सिंचन क्षमता का उपयोग (लाख है.)
1985-86	185.10	0.30	0.81
1986-87	265.10	0.74	1.09
1987-88	296.20	1.15	1.35
1988-89	310.30	1.83	2.96
1989-90	330.30	2.95	3.80
	1,387.00	6.97	10.11

स्रोत : योजनागत विकास, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उ. प्र.

वृहत् एवं मध्यम परियोजनाएं

बहुउद्देशीय परियोजनाओं में टिहरी बांध और लखवाड़ व्यासी बांध महत्वपूर्ण हैं क्योंकि इनसे सिंचन क्षमता में वृद्धि के साथ-साथ बड़े पैमाने पर विद्युत की भी आपूर्ति होगी।

टिहरी बांध

टिहरी जनपद में भागीरथी नदी पर 260 मीटर ऊंचे टिहरी बांध के लिए उत्तर प्रदेश तथा भारत सरकार का संयुक्त निगम बनाया गया है।

लखवाड़ व्यासी बांध

लखवाड़ व्यासी बांध परियोजना का कार्य क्षेत्र देहरादून में डाकपत्थर से ऊपर यमुना नदी के किनारे 20 कि.मी. तक है। इससे संचित जलाशय से पूर्वी यमुना नहर द्वारा लगभग 50 हजार हैक्टेयर भूमि पर अतिरिक्त सिंचाई सुविधा उपलब्ध होगी। यह परियोजना 1994-95 तक पूर्ण होने की आशा है।

मध्य गंगा नहर

इस परियोजना की लागत247.89 करोड़ रुपये है और इसके पूर्ण होने पर 13.88 लाख हैक्टेयर अतिरिक्त क्षेत्र की सिंचाई हो सकेगी। इसमें बिजनौर के निकट बैराज बनाकर 115 किमी. लम्बी 8280 क्यूसेक क्षमता की नहर निकाली गई है।

ऊपरी गंगा नहर

परियोजना की वितरण प्रणाली की लम्बाई 1.434 किमी. होगी। इससे हरिद्वार में भीमगोड़ा के बाईं ओर 149 किमी. लम्बी नहर निर्माणाधीन है।

गण्डक नहर परियोजना

नेपाल सीमा के अन्दर लगभग 19 कि.मी. भीतर गण्डक नहर से तिरहुत तथा पश्चिमी गण्डक नहरें निकाली गई हैं। तिरहुत से बिहार क्षेत्र की सिंचाई होती है। पश्चिमी गण्डक से गोरखपुर, देवरिया में नारायणी नहर को सम्मिलित कर लगभग 112 कि.मी. मुख्य नहर और तीन हजार कि.मी. लम्बी वितरण प्रणाली पूर्ण हो चुकी है।

शारदा सहायक परियोजना

नहर प्रणाली से लगभग 16 लाख हैक्टेयर अतिरिक्त क्षेत्र की सिंचाई हो सकेगी। प्रदेश के कुल तेरह जनपद इस नहर प्रणाली से लाभान्वित हो रहे हैं।

सरयू नहर परियोजना

बहराइच जनपद में घाघरा नदी के किनारे 47 कि.मी. लम्बी सरयू नहर पर सरयू नहर परियोजना का कार्य हो रहा है। इससे बहराइच, गौण्डा, बस्ती और गोरखपुर के 12 लाख हैक्टेयर कृषि क्षेत्र की सिंचाई हो सकेगी।

बांधों का संचित जल

नहर प्रणाली के साथ-साथ प्रदेश के दक्षिणांचल में बांधों का संचित जल सिंचाई का महत्वपूर्ण माध्यम है। अन्तर्राज्यीय समझौते के अन्तर्गत राजघाट बांध, बान सागर बांध तथा उर्मिल बांध, ललितपुर में शहजाद एवं सजनय बांध, हमीरपुर में मौदहा बांध, इलाहाबाद में मेजा बांध, मिर्जापुर में कनहर तथा ढेकवा बांध, झाँसी में डोमटी बांध और नैनीताल जनपद में जमरानी बांध प्रमुख हैं।

निजी लघु सिंचाई

प्रदेश में सिंचाई क्षमता वृद्धि में लघु सिंचाई कार्यक्रम का योगदान महत्वपूर्ण है। इस कार्यक्रम का मुख्य सम्बन्ध कृषकों के निजी तथा सामूहिक लघु सिंचाई कार्यों से है और इसके अन्तर्गत मैदानी क्षेत्र में पंप सैट, बौरिंग, नलकूप तथा रहट आदि की व्यवस्था की जाती है। प्रदेश में राजकीय नलकूपों की संख्या 29,666 के लगभग है।

पब्लिक नलकूप योजना के अन्तर्गत प्रदेश के 43 जनपदों में कुल 2330 नलकूपों की स्वीकृति थी। यह योजना विश्व बैंक से समझौते के अन्तर्गत वर्ष 1987 में पूर्ण हो गई। पिछले वर्षों में सूखे के खिलाफ किसानों के संघर्षों में निजी नलकूपों ने निर्णायक भूमिका निभाई है। सरकार ने लघु किसानों को अनुदान 23 प्रतिशत से बढ़ाकर 33-1/3 तथा सीमान्त कृषकों को मिल रही अनुदान राशि को 33-1/3 प्रतिशत से बढ़ाकर 50 प्रतिशत कर दिया है ताकि किसानों को निजी नलकूप लगवाने में सुविधा मिले। ढाई एकड़ वाले कृषक को बोरिंग की निःशुल्क सुविधा 3000 रुपये तक की सीमा तक तथा पंपसैट नलकूप पर 50 प्रतिशत अनुदान दिया जा रहा है। ढाई से 5 एकड़ तक की जोत वाले कृषकों के लिए 3000 रुपये की सीमा तक निःशुल्क बोरिंग तथा पंपसैट नलकूप पर एक तिहाई अनुदान उपलब्ध कराया जाता है। वर्ष 1986 से लघु सीमान्त कृषकों को निःशुल्क बोरिंग की सुविधा को 3000 रुपये की सीमा को बढ़ाकर डी. पी. ए. पी. क्षेत्रों के लिए 4000 रुपये तक तथा जनजाति क्षेत्रों के लिए 5000 रुपये कर दिया गया है। निजी लघु सिंचाई साधनों से छठी योजना के अन्त तक 92.59 लाख हैक्टेयर सिंचन क्षमता तथा सातवीं योजना के 35 लाख हैक्टेयर अतिरिक्त सिंचन क्षमता सृजित की गई।

निम्न तालिका प्रदेश में छठी व सातवीं योजना में सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण कार्यों में परिव्यय को प्रदर्शित करती है।

विकास मद	सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण (लाख रु. में)
1. छठी योजना (1980-85) परिव्यय	157800
2. छठी योजना (1980-85) व्यय	139997
3. सातवीं योजना (1985-90) परिव्यय	218450
4. 1985-90 के परिव्यय में 1980-85 के परिव्यय की तुलना में वृद्धि	60650

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि छठी योजना की अपेक्षा सातवीं योजना में परिव्यय में वृद्धि 60650 लाख रु. की है। यह उचित भी है कि विगत एक दशक में आंकड़ों से स्पष्ट है कि प्रतिवर्ष लगभग 43 लाख हैक्टेयर क्षेत्र प्रदेश में बाढ़ से ही

प्रभावित होता है। इसीलिए छठी योजना अवधि में 120.16 करोड़ रुपये के व्यय से 1,389 कि. मी. सीमान्त बांध 12,433 कि. मी. जल निकासी वाले नाले तथा 4,500 ग्रामों को ऊंचा करने का कार्य किया गया। सातवीं योजना में भी बाढ़ सुरक्षा को प्रमुखता दी गई। इसमें बाढ़ प्रबन्ध कार्यों की 605 योजनाओं से प्रदेश के लगभग चार लाख हैक्टेयर क्षेत्र को बाढ़ से सुरक्षा प्रदान करने का लक्ष्य है।

निष्कर्ष

अतः सिंचाई योजना के कार्यों को एक वर्ष अथवा एक पंचवर्षीय योजना में सीमित करना सम्भव नहीं है। सिंचाई सुविधाओं का विस्तार एक निरन्तर प्रक्रिया है। सिंचाई सुविधाओं के विस्तार का ही यह परिणाम है कि विगत दो दशकों में अन्न उत्पादन में डेढ़ गुना से अधिक वृद्धि हुई। खाद्यान्न के मामले में हमें आत्मनिर्भरता मिली। पर इतना अवश्य है कि सृजित सिंचन क्षमता तथा वास्तविक सिंचाई के उपयोग में अब भी अन्तर है। इसके लिए किसानों को फसल चक्र में परिवर्तन करना होगा। कृषि विकास और खाद्यान्न उत्पादन की वृद्धि में कृषक के साथ-साथ सभी का हित शामिल है।

प्रवक्ता राजनीतिक विज्ञान
6, मेविला कम्पाउण्ड तल्लीताल, नैनीताल।

देश का सच्चा सेवक

ओम प्रकाश मतवाला

सम्मान करो भारत वालो मानव हित के उपदेशक का
सम्मान करो लालाजी का देश के सच्चे सेवक का

जन सेवक ने हाल निहारा निर्बल, अनपढ़ इन्सानों का
हिन्दुस्तानी नारियों का, निर्धन मासूम किसानों का

ज्ञान दिया लालाजी ने गोरों के अत्याचारों का
भूखे-नंगे मजदूरों की दर्दीली हाहाकारों का

निर्मम अंग्रेजी शासन से हम न्याय नहीं पा सकते हैं
कंगाल हमें करने वाले खुशहाल नहीं कर सकते हैं

सम्मान करो भारत वालो मानव हित के उपदेशक का
सम्मान करो लालाजी का देश के सच्चे सेवक का

लालाजी ने जनता को परमार्थ का पाठ पढ़ाया था
देश के हित में निज हित के बलिदान का पाठ पढ़ाया था

नैतिकता का पालन करना मानव का धर्म बताया था
तन, मन, धन के शोषण को निर्मम अन्याय बताया था

आयोजन हिंसक क्रांति का स्वीकार नहीं वे करते थे
तानाशाही सरकारों का, विश्वास नहीं वे करते थे

सम्मान करो भारत वालो मानव हित के उपदेशक का
सम्मान करो लालाजी का देश के सच्चे सेवक का

हिन्दू-मुस्लिम संगठनों से दहलाया दिल अंग्रेजों का
हिन्दुस्तानी संगठनों से घबराया दिल अंग्रेजों का

उपयोग विदेशी मालों का आपने बन्द कराया था
देशी चीजें अपनाने का जनता को लाभ बताया था।

अंग्रेजों ने क्रोधित होकर लालाजी बन्दी बनवाये
सात बरस की जेल सुनाके माण्डले जेल में भिजवाये

सम्मान करो भारत वालो मानव हित के उपदेशक का
सम्मान करो लालाजी का देश के सच्चे सेवक का

जनता के जिस सेवक ने अपना जीवन बलिदान किया
जनता ने प्यारे सेवक को पंजाब केसरी नाम दिया

साइमन का एक कमीशन लाहौर में जिस दिन आया था
बहिष्कार का एक प्रदर्शन, लालाजी ने करवाया था

गोरों के एक अधिकारी ने लाठी से मारे लालाजी
सत्रह दिन की पीड़ा सहकर, परलोक सिधारे लालाजी

ए-42, सी. बी.आर. आई. कालोनी,
रूड़की, हरिद्वार (उ. प्र.)

ग्रामीण विकास में सेवा क्षेत्र अवधारणा का महत्व

डा. प्रभु दयाल यादव

ग्रामीण क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है, इसके बावजूद भी यह क्षेत्र भूतकाल में अत्यधिक उपेक्षित रहा है। ग्रामीण क्षेत्र में पर्याप्त बैंकिंग सुविधाएं उपलब्ध नहीं थीं और जो भी सुविधाएं उपलब्ध थीं, वे भी केवल बड़े किसानों को उपलब्ध थीं। भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा नियुक्त अखिल भारतीय ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण समिति (1954) का एक प्रमुख निष्कर्ष यह था कि सहकारी ऋण प्रणाली कृषि क्षेत्र की ऋण आवश्यकताओं को कारगर ढंग से पूरा करने में असमर्थ रही है। सूदखोर महाजन ऋण पर ऊंची दरों पर ब्याज लेते थे, जो उत्पादन और उत्पादकता तथा कृषि आय के स्तर से संबद्ध नहीं होता था। इसीलिए 1954 से ही देश में समाजवादी समाज की स्थापना का लक्ष्य निर्धारित किया गया। ग्रामीण क्षेत्रों में वाणिज्यिक बैंकों की संलग्नता बढ़ाने के रूप में ही 1955 में इम्पीरियल बैंक को सार्वजनिक क्षेत्र के दायरे में लाया गया तथा उसे 'भारतीय स्टेट बैंक' नाम दिया गया। विभिन्न योजनाओं में इस संदर्भ में लक्ष्य एवं प्राथमिकताएं निर्धारित की गईं तथा इनमें सर्वप्रथम लक्ष्य 'सामाजिक न्याय के साथ आर्थिक विकास' रखा गया। इसी परिप्रेक्ष्य में बैंकों को 1967 में 'सामाजिक नियंत्रण' कानून के अन्तर्गत लाया गया। असंतुलित आर्थिक विकास एवं उपेक्षित क्षेत्रों की ओर उचित ध्यान देने के लिए 1969 में 14 बड़े बैंकों का (1980 में 6 और बैंकों का) राष्ट्रीयकरण किया गया। इससे बैंकों के ढांचे, कार्य प्रणाली एवं साख नीति में व्यापक परिवर्तन हुए।

15 नवम्बर, 1969 को प्रस्तुत 'नारीमन समिति' की रिपोर्ट के आधार पर वाणिज्यिक बैंकों द्वारा क्षेत्र-वार विकास करने के लक्ष्य से दिसम्बर, 1969 में अग्रणी बैंक योजना आरम्भ की गई। इसमें देश के सभी जिलों को बैंक में बांटकर प्रत्येक बैंक को अपने जिलों में शाखा विस्तार, साख वितरण तथा अन्य सामान्य विकास का उत्तरदायित्व सौंपा गया। समाज के आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के उत्थान के लिए वर्ष 1972 में विभेदक ब्याज दर योजना आरम्भ की गई जिसके अन्तर्गत बैंक द्वारा 4 प्रतिशत वार्षिक ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध कराया जाता है।

क्षेत्रीय विकास अवधारणा के अन्तर्गत ही ग्रामीण साख की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए 2 अक्तूबर, 1975 को क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक स्थापित करने की योजना आरम्भ की गई। इसके अन्तर्गत प्रत्येक बैंक का कार्यक्षेत्र एक या दो जिलों तक सीमित रखा गया। 1975 में बीस सूत्री कार्यक्रम आरम्भ किया, जो बाद में दो बार संशोधित किया गया, जिसके अन्तर्गत बैंकों को अनेक जिम्मेदारियां सौंपी गईं।

इसके अलावा लघु कृषक विकास योजना, सीमान्त कृषक व खेतिहर मजदूर विकास योजना, पहाड़ी क्षेत्र विकास योजना, कमाण्ड एरिया विकास योजना, समन्वित ग्रामीण विकास योजना, ग्रामीण उद्योग योजना, शिक्षित बेरोजगार युवाओं के लिए स्व-रोजगार योजना आदि अनेक योजनाएं आरम्भ की। इन सभी कार्यक्रमों का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर प्रदान करना तथा क्षेत्रीय असंतुलन, असमानता दूर करना तथा लोगों को गरीबी की रेखा से ऊपर उठाना है।

यद्यपि बैंकों ने ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए अनेक योजनाएं चलाई हैं जिनसे ग्राम्य समुदाय तथा समाज के कमजोर वर्गों को रोजगार व आय के स्रोत मिल सकें, इसके बावजूद भी देश में क्षेत्रीय संतुलन और आर्थिक समानता नहीं आई। भारतीय रिजर्व बैंक की पहल पर नवम्बर-दिसम्बर, 1987 में सरकारी क्षेत्र के बैंकों के शीर्ष कार्यपालकों द्वारा किए गए अध्ययन में भी बैंकों की ग्रामीण उधार की गतिविधियों में कुछ कमजोरियां परिलक्षित हुई हैं। इस अध्ययन में यह पाया गया कि बैंक ऋण के प्रवाह के परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन, उत्पादकता तथा आय में वृद्धि के अंतिम लक्ष्य को पाने के लिए बैंक जागरुक प्रयास नहीं कर रहे हैं। योजनाबद्धता तथा गहन क्षेत्र दृष्टिकोण के मामले में लगातार कमी आ रही थी। इसी तरह ग्राम अंगीकरण योजना के तहत कुछ बैंकों द्वारा गांव गोद लेने की योजना शुरू की गई जिससे अच्छे कारोबार की संभावना वाले क्षेत्रों की उपेक्षा की गई जहां कारोबार की संभावना कम थी। दूसरी तरफ, ग्रामीण क्षेत्र के वित्त पोषण के लिए अपनाए गए क्षेत्र दृष्टिकोण का लक्ष्य समस्त ग्रामीण

अर्थव्यवस्था को विकसित करना नहीं था। सहायता राशि तथा सरकार द्वारा प्रायोजित लक्ष्याभिमुखी योजनाओं से प्रायः बैंक ऋण और उत्पादकता के बीच अन्तर आ गया, क्योंकि इन योजनाओं के कार्यान्वियन में अनेक कमियां पाई गईं। बैंकों की ऋणों की वसूली की स्थिति में निरन्तर गिरावट से उत्पादकता हेतु उधार दिए जाने वाले कोषों के पुनःनिवेश की बैंकों की क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ा।

अग्रणी बैंक योजना को मुख्यतः अवास्तविक ऋण योजनाओं तथा ऋण की उपलब्धता और अन्य निविष्ट साधनों के बीच सामंजस्य न होने के कारण अपेक्षित सफलता नहीं मिल पाई। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक ने अर्थक्षमता कमजोर वर्गों को प्रभावी रूप से ऋण देने के उनके उद्देश्यों से हटने जैसी समस्याएं अनुभव कीं।

इसी परिप्रेक्ष्य में भारतीय रिजर्व बैंक ने जनवरी, 1988 में 'ग्रामीण उधार' पर एक सेमीनार आयोजित किया जिसमें सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के अध्यक्षों, भारत सरकार और राष्ट्रीय स्तर की ऋण संस्थाओं के शीर्ष कार्यपालकों ने भाग लिया। इसी सेमीनार में ग्रामीण उधार के लिए एक नये दृष्टिकोण अथवा सेवा क्षेत्र अवधारणा (सर्विस एरिया एप्रोच) का सुझाव दिया गया। इसके अनुसार क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों सहित वाणिज्यिक बैंकों की प्रत्येक ग्रामीण तथा अर्द्ध-शहरी शाखा को एक निर्धारित क्षेत्र आवंटित किया गया जिसके भीतर भारत सरकार की समस्त विस्तार एवं विकास एजेंसियों के साथ समन्वय करते हुए आर्थिक विकास की जिम्मेदारी सौंपी जाएगी।

सेवा क्षेत्र अवधारणा की मुख्य बातें

इस योजना में निम्न बातों को शामिल किया जाना था—

- प्रत्येक बैंक शाखा के लिए सेवा क्षेत्र का निर्धारण और आवंटन।
- ऋण देने योग्य गतिविधियों की संभावना का मूल्यांकन करने के लिए सेवा क्षेत्र में गांवों का सर्वेक्षण तथा सहायता हेतु हिताधिकारियों का निर्धारण।
- प्रत्येक शाखा द्वारा सेवा क्षेत्र के बारे में वार्षिक आधार पर ऋण योजना तैयार करना।
- एक तरफ ऋण संस्थाओं के बीच तथा दूसरी तरफ इन क्षेत्र में स्थित विकास एजेंसियों के बीच समन्वय स्थापित करना ताकि ऋण योजनाओं को अनवरत रूप से प्रभावशाली तौर पर कार्यान्वित किया जा सके।
- योजनाओं के क्रियान्वयन में हुई प्रगति का सतत अनुप्रवर्तन करना।

देश में 618216 गांव हैं जिनका आवंटन क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों सहित सभी वाणिज्यिक बैंकों की 42158 ग्रामीण तथा अर्द्ध-शहरी शाखाओं के बीच इस प्रकार किया गया—

	बैंक शाखाओं की संख्या	आवंटित गांवों की संख्या	प्रति शाखा औसत
सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक	26016	366382	14
क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक	13653	236592	17
निजी क्षेत्र के बैंक	2489	15242	6
	42158	618216	12

उपरोक्त अवलोकन से ज्ञात होता है कि औसत रूप से क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को आर्थिक शाखाओं का आवंटन किया गया है। उत्तर-पूर्व के ऐसे राज्यों में जहां तुलनात्मक रूप से बैंकों की कम शाखाएं हैं, को 25 से अधिक भी गांव आवंटित किए गए हैं। कुल बैंक शाखाओं की 14 प्रतिशत शाखाओं को 25 से अधिक गांव आवंटित किए गए हैं। वैसे औसत रूप से प्रत्येक शाखा के लिए 15 से 25 गांव आने थे। शाखा आवंटन के मापदण्ड में शाखा की निकटता, उसी पंचायत के भीतर गांवों का समूह, भौगोलिक स्थिति में समीपता तथा आसानी से पहुंच शामिल हैं। कम बैंक वाले क्षेत्रों का पता लगा कर वहां और बैंक शाखाएं खोली जाएंगी ताकि प्रत्येक बैंक शाखा को उतना ही सेवा क्षेत्र आवंटित किया जाए जिसे शाखा अच्छी तरह संभाल सके। ग्राम आवंटन प्रक्रिया काफी पहले ही समाप्त हो चुकी है।

प्रत्येक शाखा के लिए सेवा क्षेत्र आवंटित हो जाने के बाद, उन्हें आवंटित गांव का सर्वेक्षण करना चाहिए तथा गांव की रूपरेखा तैयार करनी चाहिए। ऐसे सर्वेक्षण में वर्तमान आर्थिक गतिविधियों एवं संभावनाओं का विस्तार जैसे विभिन्न पहलुओं को शामिल किया जाना चाहिए। इसमें ग्रामीणों की वर्तमान कार्यकुशलता और ऋण देने वाली संस्थाओं द्वारा ग्रामीण परिवारों को दी गई सहायता को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

प्रत्येक शाखा को अपने सेवा क्षेत्र की वार्षिक साख योजना तैयार करनी होगी। इस उद्देश्य के लिए, पहले साख योजना प्रत्येक गांव के लिए तैयार की जाएगी और इसके बाद ग्राम साख योजना से उस शाखा की सेवा क्षेत्र साख योजना तैयार की जाएगी। इस साख योजना में सर्वेक्षण के द्वारा प्राप्त सूचनाओं तथा स्थानीय विकास एजेंसियों की सूचनाओं के आधार पर उस

क्षेत्र की आवश्यकता एवं संभावनाओं को दिखाया जाएगा। शाखाएं अपने सेवा क्षेत्र के लिए उपयुक्त योजनाओं का पता लगाने के लिए वर्तमान जिला ऋण योजना/वार्षिक कार्य योजना को ध्यान में रख सकती है। इस संबंध में अग्रणी बैंक अधिकारी की निर्णायक भूमिका होगी और यह आशा की जाती है कि वह जिले की प्रत्येक शाखा प्रबंधक को आवश्यक सहयोग एवं मार्गदर्शन देगा। इस योजना के सफल क्रियान्वयन के लिए क्षेत्रीय सरकारी अधिकारियों से सम्पर्क रखना होगा, वे इस संदर्भ में गैर-साख एवं अन्य आधारभूत सूचनाएं उपलब्ध कराएंगे। एक खण्ड (ब्लाक) में सभी शाखाओं द्वारा तैयार किया गया वार्षिक साख योजना सहकारी समिति के ऋण कार्यक्रमों सहित उस खण्ड की साख योजना होगी। खण्ड स्तर पर इन गतिविधियों में समन्वय स्थापित करने के लिए बैंक एवं सरकारी अधिकारियों की समिति होगी। इस समिति के सहकारी बैंकों सहित सभी बैंक सदस्य होंगे। खण्ड विकास अधिकारी तथा तकनीकी अधिकारी के अलावा उस क्षेत्र में कृषि, उद्योग आदि के भी सदस्य होंगे। संबंधित जिले का अग्रणी बैंक अधिकारी उस समिति का अध्यक्ष होगा। खण्ड स्तर की बैठक में नाबार्ड एवं भारतीय रिजर्व बैंक के भी व्यक्ति उपस्थित हो सकते हैं। अतः साख योजना के प्रारूप को अंतिम रूप देने से पूर्व खण्ड स्तरीय बैंकर्स समिति से विचार-विमर्श करना चाहिए।

वार्षिक ऋण योजना तैयार करते समय क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक शाखाओं को लक्ष्य समूह से ही ऋण योजना तैयार करनी चाहिए और अपने सेवा क्षेत्र में गैर-लक्ष्य समूह के लिए ऋण योजना तैयार करने की जिम्मेदारी नामित वाणिज्यिक बैंक शाखा की होगी। वाणिज्यिक बैंक को सेवा क्षेत्र में अपनी ऋण योजना की रूपरेखा बनाते समय प्राथमिक कृषि ऋण सहकारी समिति, भूमि सुधार बैंक तथा भूमिहीन श्रमिक बहुउद्देशीय समितियों के ऋण कार्यक्रम को भी ध्यान में रखना चाहिए।

सेवा क्षेत्र अवधारणा में शाखा प्रबंधकों को शोषित वर्ग के उदार करने की नई भूमिका निभाने का दायित्व सौंपा गया है। अतः शाखा प्रबंधकों का वास्तविक कौशल उनके द्वारा इसके सही कार्यान्वयन हेतु अपनाई गई योजनाओं में निहित है। अनेक योजनाएं इसीलिए असफल हो जाती हैं कि वहां उनके कार्यान्वयन के लिए अपेक्षित भावना का अभाव होता है। अतः यह आशा की जाती है कि ये शाखा प्रबंधक गांवों में जाने और गरीब तथा दलित, घोर विपन्नता में रह रहे भाग्यहीन नागरिकों को सहायता देने का भरसक प्रयास करेंगे।

सेवा क्षेत्र अवधारणा से आशाएं

इस नई अवधारणा का उद्देश्य ऋण गुणवत्ता में सुधार करना, ऋण का अधिक श्रेष्ठ उपयोग करना, उत्पादन और उत्पादकता के साथ अधिक अच्छा समन्वय स्थापित करना तथा बैंक ऋण का उचित रूप से पुनर्निवेश करना है। सेवा क्षेत्र अवधारणा के फलस्वरूप प्रत्येक शाखा को आवंटित क्षेत्र के विकास पर संगठित रूप से ध्यान दिया जाना संभव हो सकेगा तथा बहु एजेंसी प्रणाली से कुछ सीमा तक प्रयासों में जो दोहराव होता है उससे इस नये दृष्टिकोण के अन्तर्गत बचा जा सकेगा। विस्तृत क्षेत्र में फैले हुए उद्योगों तथा उसके परिणामस्वरूप ऋण वितरण के पश्चात पर्यवेक्षण के स्तर में अकुशलता के बजाए संगठित तथा नियोजत रूप से उधार देना संभव हो सकेगा। इससे शाखा प्रबन्धक के लिए ऋण के अंतिम उपयोग पर प्रभावी नियंत्रण रखने तथा ऋण के उत्पादन तथा उत्पादकता के स्तर तथा लाभ भोगियों के आय स्तर में वृद्धि के प्रभाव का मूल्यांकन करने का काम आसान हो जाएगा। इस क्षेत्र के लिए समस्त कार्य योजना शाखा स्तर पर ही बनाई जाएगी जिससे शाखा प्रबंधक के रूप में अपनी योजनाओं के प्रति अहम् रहेगा। इस प्रकार इस अवधारणा का उद्देश्य उधार देने के काम की गुणवत्ता में सुधार लाना, उत्पादन तथा उत्पादकता के बीच बेहतर समन्वय स्थापित करते हुए बैंक ऋण के उचित पुनर्विनियोग से ऋण के उपयोग को सर्वोत्तम स्वरूप प्रदान करना है।

सेवा क्षेत्र अवधारणा एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक

सेवा क्षेत्र अवधारणा के अन्तर्गत क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को कार्य करने की पूरी छूट नहीं दी, क्योंकि ग्रामीण बैंकों की शाखाओं को निर्धारित ग्रामीण क्षेत्रों में अलक्ष्य समूह को वित्त सुविधा वाणिज्यिक बैंकों द्वारा ही उपलब्ध करवाई जाएगी। ग्रामीण बैंकों की मुख्य समस्याएं जमाराशियों में अपेक्षाकृत कम बढ़ोतरी, वसूली की शोचनीय दशा और अधिकांश का घाटे में चलना है। अतः इन समस्याओं से निपटने के लिए ग्रामीण बैंकों को निर्धारित सेवा क्षेत्र में कार्य करने की पूरी छूट दी जानी चाहिए। यदि ग्रामीण बैंकों को निर्धारित सेवा क्षेत्र में लक्ष्य समूह को ऋण वितरण का कार्य वाणिज्यिक बैंकों द्वारा किया जाएगा तो देश के अधिकांश भाग में बैंकिंग क्षेत्र की दोहरी शक्ति लगेगी। अतः सेवा क्षेत्र अवधारणा के वास्तविक उद्देश्यों को पाने के लिए ग्रामीण बैंकों को निर्धारित सेवा क्षेत्रों में ऋण वितरण का समस्त कार्य लक्ष्य समूह एवं गैर-लक्ष्य समूह का भेदभाव किए बिना ही सौंप दिया जाए ताकि नागरिकों को अधिकाधिक सुविधाएं मिल सकें।

सेवा क्षेत्र अवधारणा और ग्राम अंगीकरण योजना

कुछ बैंक द्वारा अंगीकरण योजना (विलेज एडोपशन स्कीम) आरम्भ की थी। इस योजना से बैंकों में प्रतियोगिता काफी बढ़

गई थी, क्योंकि इसके अन्तर्गत कारोबार की अच्छी संभावना वाले गांव की ओर विशेष ध्यान दिया जाता था तथा जो गांव/क्षेत्र अच्छे कारोबार वाले नहीं थे, उन्हें छोड़ दिया गया। इससे असमानता घटने की बजाए और बढ़ने लगी। सरकार द्वारा प्रायोजित आपूर्ति पर आधारित और लक्ष्योन्मुखी योजनाओं के संबंध में बैंक ऋण और उत्पादकता के बीच संबंध कार्यान्वयन में खामियों के कारण कमजोर प्रतीत हुआ। इन दोनों योजनाओं में प्रमुख अन्तर सारणी में दिया गया है—

सेवा क्षेत्र अवधारणा की व्यवहारिक कठिनाइयां/समस्याएं

इस अवधारणा में अनेक खामियां पाई गई हैं जैसे—

- इस कार्यक्रम का मूल उद्देश्य गांवों का सम्पूर्ण विकास करना है जबकि अधिकांश शाखा प्रबंधक लक्ष्यों की प्राप्ति की ओर ही विशेष ध्यान देते हैं तथा गांव का विकास हो रहा है अथवा नहीं, इससे उनको कोई सरोकार नहीं है।
- ग्राम आवंटन योजना के अन्तर्गत कुछ बैंक शाखाओं को एक-एक तथा कुछ शाखाओं को 25 से अधिक गांव आवंटित किए गए हैं। अतः ये दोनों ही कार्य संचालन की दृष्टि से उचित नहीं है। अतः सेवा क्षेत्र अवधारणा के

सेवा क्षेत्र अवधारणा और ग्राम अंगीकरण योजना

अन्तर का आधार	सेवा क्षेत्र अवधारणा	ग्राम अंगीकरण योजना
1. जिम्मेवारी	आवंटित गांव/क्षेत्र को आवश्यकता आधारित साख उपलब्ध कराने की उस शाखा की पूरी जिम्मेदारी होगी।	इस योजना के अन्तर्गत शाखा उस गांव/क्षेत्र के पूर्ण विकास की जिम्मेवार नहीं होती थी।
2. भौगोलिक सीमाबद्धता	बैंक शाखा का परिचालित क्षेत्र आवंटित गांवों तक ही सीमित रहेगा।	इसके अन्तर्गत यह आवश्यक नहीं था कि बैंक सिर्फ अंगीकृत गांवों तक ही अपना व्यवसाय सीमित रखें।
3. गांव का चयन/आवंटन	इसके अन्तर्गत गांवों का आवंटन शाखा की निकटता एवं समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत गांव विशेष प्रमुख अंश आदि बातों को ध्यान में रखकर किया गया है।	इस योजना के अन्तर्गत शाखा की इच्छानुसार व्यवसाय संभाव्यता को ध्यान में रखते हुए गांव/क्षेत्र का चयन किया जाता था।
4. विकास का आधार	इस योजना के अन्तर्गत विभिन्न योजनाओं की संभाव्यताओं का पता लगाने के लिए विस्तृत सर्वेक्षण का भार शाखा प्रबंधक पर डाला गया है।	इसके अन्तर्गत कुछ सर्वेक्षण करके कुछ योजनाएं लागू की गई थीं।
5. समाकलन (इंटीग्रेशन)	इसमें साख एवं गैर-साख पहलुओं के बीच पूर्ण समाकलन की आशा की गई है।	इसमें साख एवं गैर-साख गतिविधियों के बीच कोई समाकलन नहीं था।
6. विभिन्न एजेंसियों का शामिल होना	इसमें योजनाओं के क्रियान्वयन में अन्य संस्थाओं का सहयोग भी लिया जाता है।	इसके अन्तर्गत अन्य संस्थाओं का सहयोग आवश्यक नहीं था।
7. कार्य विस्तार	चुने हुए क्षेत्र/गांवों के ऐसे सभी व्यक्तियों/परिवारों को साख उपलब्ध कराई जाएगी जिन्हें आवश्यकता है।	इसमें ऐसा कोई दृढ़ संकल्प नहीं होता था कि गांव के सभी साख की आवश्यकता वालों को साख उपलब्ध कराई जाए।
8. समन्वय के लिए समिति	इसके अन्तर्गत समन्वय के लिए खण्ड स्तर पर बैंकर्स समिति का गठन किया जाता है।	इसमें समन्वय के लिए ऐसा कोई संगठन नहीं होता था।

अतः ग्राम अंगीकरण योजना की कमियां को देखते हुए सेवा क्षेत्र अवधारणा की एकीकृत प्रणाली अपनाई गई।

वास्तविक उद्देश्यों को पाने के लिए एक बैंक शाखा को 5 से 10 गांव आवंटित किए जाने चाहिए तथा किसी भी स्थिति में 10 से अधिक नहीं होने चाहिए। जहां आवश्यक हो, अन्य बैंक शाखाएं खोली जा सकती हैं।

- देश के 196 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में से अधिकांश हानि पर चल रहे हैं। इसके बावजूद भी इनके लिए निर्धारित ग्रामीण क्षेत्रों में अलक्ष्य समूह को वित्त सुविधा वाणिज्यिक बैंकों द्वारा उपलब्ध कराई जाएगी, जो किसी भी रूप में तर्कसंगत नहीं है। अतः इन्हें अपने कार्यक्षेत्र में लक्ष्य समूह एवं अलक्ष्य समूह में भेदभाव के बिना ही कार्य करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों को उचित दर पर साख सुविधा उपलब्ध कराना था, क्योंकि वाणिज्यिक बैंकों की ग्रामीण शाखाओं की लागत अधिक आ रही थी जिसके कारण अधिकांश ग्रामीण शाखाएं हानि पर चल रही थीं। इसके बावजूद वाणिज्यिक बैंकों को गांवों का आवंटन करना उचित प्रतीत नहीं होता है। इस अवधारणा में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के उद्देश्य को गौण माना गया है।
- सेवा क्षेत्र अवधारणा के अन्तर्गत बैंक शाखाओं द्वारा गांवों का चुनाव न करके उन पर ये गांव अनिवार्य रूप से थोपे जा रहे हैं जिनका उन्हें विकास करना है। ऐसे गांवों में विकास संभाव्यता का पहले से कोई अनुमान नहीं होता।
- ऋण के सर्वोत्तम उपयोग के लिए विभिन्न ऋण एजेंसियों तथा विकास एजेंसियों के बीच उच्च कोटि के समन्वय की आवश्यकता होगी जिसका साधारणतया अभाव पाया जाता है।
- बैंक कर्मचारी ग्रामीण क्षेत्रों में काम करने के कम इच्छुक होते हैं, वे इन योजनाओं में कम रुचि लेते हैं। अतः ग्रामीण क्षेत्रों में काम करने की कर्मचारियों में रुचि उत्पन्न करने के लिए उन्हें प्रोत्साहन योजना चलाकर प्रोत्साहित किया जा सकता है।
- इस अवधारणा की सफलता के लिए आवश्यक है कि कर्मचारी प्रशिक्षित हों, जबकि अधिकांश कर्मचारी/अधिकारी ग्राम साख योजना में प्रशिक्षित नहीं हैं, अतः इसके लिए उन्हें उचित प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
- सहकारी बैंकों को इस योजना में भागीदार नहीं बनाया गया है जिसके परिणामस्वरूप उनके व्यवसाय पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।
- अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में बैंकिंग उद्योग नवोन्मेषी एवं चुनौतीपूर्ण क्षेत्रों जैसे—व्यापारी, बैंकिंग, लीजिंग, म्यूचुअल फण्ड, जोखिम पूंजी, क्रेडिट कार्ड, आवास जैसे लाभदायक क्षेत्रों में प्रवेश कर रहे हैं, वहीं भारतीय बैंकिंग ग्रामीण क्षेत्रों की समस्याओं से जूझ रही है।

भारतीय बैंकिंग व्यवस्था संभवतः विश्व की सबसे बड़ी बैंकिंग व्यवस्था है जिसके निश्चित सामाजिक उद्देश्य हैं जो हर वर्ग के आर्थिक विकास के लिए प्रतिबद्ध है। अतः ऐसे रास्ते पर चलने में कठिनाईयां अवश्य आएंगी लेकिन बैंक इनका दृढ़ता से मुकाबला करते हुए हमेशा आगे बढ़ते रहेंगे। बैंकिंग उद्योग राष्ट्रीय एवं सामाजिक दायित्व पूरा करने के लिए भरसक प्रयास कर रहा है। सामाजिक बैंकिंग के क्षेत्र में बैंकों ने काफी जिम्मेदारियां निभाई हैं। सेवा क्षेत्र अवधारणा के अंतर्गत ग्रामीण जनता को आवश्यक सहायता प्रदान करने के लिए शाखा प्रबंधकों को भारी जिम्मेदारी सौंपी गई है। अतः यदि शाखा प्रबंधक राष्ट्र की सेवा में सच्ची भावना से अपनी सेवाएं समर्पित करेंगे तो देश के ग्रामीण क्षेत्रों की गरीबी, दुर्दशा, निरक्षरता तथा विपत्ति दूर हो जाएगी। इस नई प्रक्रिया से ग्रामीण ऋणदान की गुणवत्ता में विशिष्ट सुधार आएगा तथा इससे बैंक ऋण, उत्पादकता एवं आय स्तरों के बीच बेहतर संयोजन स्थापित हो सकेगा।

स्टेट बैंक आफ बीकानेर एण्ड जयपुर
निरीक्षण विभाग, प्रधान कार्यालय
तिलक मार्ग, जयपुर-302005

ग्रामीण विकास में कम्प्यूटर की भूमिका

मनीष दवे

वर्तमान समय में दिनों-दिन कम्प्यूटर का प्रयोग हर क्षेत्र में हो रहा है। कम्प्यूटर वह मशीन है जो कम समय में अधिक काम करने की कुशल दक्षता रखती है। इसमें बहुत बड़े रिकार्ड रखने की क्षमता होती है व साथ ही अपेक्षित सूचनाएं कम-से-कम समय में प्राप्त की जा सकती हैं। चूंकि इसमें प्राप्त परिणामों में सत्यता अत्यधिक होती है इसलिए हर कोई इससे आकर्षित होकर इसे अपनाना चाहता है। हमारे देश का महत्वपूर्ण हिस्सा कृषि व्यवस्था एवं ग्रामीण विकास भी इसके उपयोग से अछूता नहीं रहा है। इन दिनों कम्प्यूटर की बढ़ती हुई उपयोगिता को गांवों में ले जाने की प्रक्रिया की जा रही है। चूंकि हमारे देश की जनसंख्या का अहम् भाग गांवों में निवास करता है और खेती से जुड़ा हुआ है। अतएव उनके लिए कम्प्यूटर की सेवा उपलब्ध कराना तो सचमुच एक वरदान साबित होगा। कृषि का विकास जितना जल्दी होगा, हमारा देश भी उतनी ही तीव्र गति से प्रगति पथ पर अग्रसर होगा। उन्नत किस्मों की पैदावार, भू-सुधार, कीटनाशकों के प्रयोग व बीज नियंत्रण जितने जरूरी एवं क्रियाशील कदम हैं उतना ही कम्प्यूटर का उपयोग भी अनिवार्य सिद्ध होगा।

अभी ग्रामीण विकास संबंधी विभिन्न योजनाओं का चयन एवं समीक्षा, कृषि संबंधी आंकड़ों का संकलन एवं कम्पाइलेशन, भूलेख संबंधी विभिन्न सूचियों का रख-रखाव एवं संकलन हाथ से किया जाता है। इस कार्य शैली में समय तो अधिक लगता ही है साथ ही गलतियां होने की भी गुंजाइश रहती है। इस कारण ग्रामीण विकास संबंधी विभिन्न योजनाओं के संबंध में उचित निर्णय नहीं हो पाता है। आज के तकनीकी युग में जहां हर तरफ कम्प्यूटर के प्रयोग के लिए होड़ लग रही है वहां यदि कृषि की दिशा में भी इस बहुउपयोगी मशीन का इस्तेमाल शुरू किया जाए तो निश्चित रूप से सफलता मिलनी ही है। इसी आशा और विश्वास के साथ आंकड़ों के संकलन को सही व सुगम तरीके से रख-रखाव के लिए तैयार करने का कार्य आरंभ हो चुका है।

भू-लेख के दृष्टिकोण से मिलान खसरा एक बहुत ही महत्वपूर्ण अभिलेख है,इसकी तैयारी पड़ताल होने के बाद शुरू होती है तथा लेखपाल स्तर, कानूनगों स्तर से तैयार होते हुए जिला स्तर पर संकलित होती है। अभी यह जानकारी लेखापालों के माध्यम से तैयार की जाती है तथा जिला मुख्यालय तक पहुंचने में काफी वक्त जाया करती है। कम्प्यूटर के प्रयोग से यह कार्य बहुत ही सरल हो जाएगा। कम्प्यूटर त्वरित गति से खसरा तैयार करना, कृषि भूमि तथा आवास स्थल का आवंटन करना व सीलिंग भूमि के निर्धारण का कार्य बहुत ही आसानी से व बेहतर ढंग से कर सकेगा। 3.125 एकड़ से कम भूमि वाले काश्तकारों की सूची बनाने से लेकर हरिजन पट्टा कार्यक्रम तक यह अपना सहयोग प्रदान करने में सक्षम है।

सीलिंग लागू करते समय यह देखा जाता है कि काश्तकार के पास उसके नाम पर कुल कितनी भूमि है। इस कार्य की कितनी ही जांच-पड़ताल द्वारा जानकारी तैयार की जाए, वह हमेशा अपूर्ण व अपर्याप्त ही रहती है। भूलेख संबंधी रिकार्डों के कम्प्यूटर में रखे जा सकने के कारण हम किसी भी समय यह बता सकने की स्थिति में होंगे कि किसी व्यक्ति के पास कुल कितनी जमीन है और उसका कितना भाग खेती के लिए इस्तेमाल में लाया जा रहा है। आवश्यकता पड़ने पर जमीन की स्थिति एवं अलग-अलग भूमिखण्डों के आंकड़े भी पता लगाए

जा सकते हैं। इससे सिंचित एवं असिंचित भूमि का झगड़ा अपने आप ही निपट सकेगा।

किसी भी काश्तकार को ऋण प्रदान करते समय एक प्रमाण पत्र की आवश्यकता होती है कि उसके नाम कुल कितनी भूमि है। इस बात का सही पता नहीं चल पाता है क्योंकि उपस्थित रिकार्ड सही जानकारी उपलब्ध नहीं करा पाते हैं। असमर्थता की स्थिति में भूमि का मन-माने ढंग से आवंटन भी होता है और ऋण भी वितरित हो रहा होता है। कम्प्यूटरों के द्वारा रिकार्ड रखे जाने से यह समस्या स्वतः ही हल हो जाएगी। हमारे पास सीमान्त कृषक, लघु कृषक, भूमिहीन कृषक मजदूरों के परिवार संबंधी आंकड़े न होने की वजह से योजनाओं के निर्धारण एवं क्रियान्वयन में असुविधा होती है। परिणामस्वरूप हमें आशा के अनुरूप लाभ नहीं मिल पाता है। इस प्रकार निःसंदेह यह कहा जा सकता है कि वर्तमान में भू अभिलेखों के रख-रखाव में कम्प्यूटर का प्रयोग बहुत ही कारगर होगा जिससे जहां एक ओर हम अपने अभिलेख सही ढंग से रख पाएंगे वहीं दूसरी ओर जनता को भी काफी सुविधा होगी।

आजकल ग्राम स्तर पर खसरा रखा जाता है जिसमें प्रत्येक खेत में बोई गई फसल, सिंचाई के साधन, सिचिंत क्षेत्र, पेड़ों की संख्या, उनकी किस्म तथा अतिक्रमण आदि के बारे में सूची रहती है। यह सूची ग्राम स्तर पर लेखपाल द्वारा तैयार की जाती है तथा इन्हीं के आधार पर ग्राम स्तर, तहसील स्तर तथा जिला स्तर पर विभिन्न प्रकार की सूची संकलित की जाती है। वर्षों में तैयार होने वाली इस सूची में गलतियों की अनेकों संभावनाएं होती हैं। दूरस्थ ग्रामीण अंचलों में जाकर आंकड़े एकत्र करना कोई आसान काम नहीं है जबकि कम्प्यूटर के माध्यम से यह कार्य बहुत कम समय में हो जाता है। इसमें खेत के क्षेत्रफल, सिंचित क्षेत्रफल, विभिन्न फसलों की उपजें, फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल, आबादी व अतिक्रमण की जानकारियां व्यवस्थित ढंग से समायोजित की जा सकती हैं। फिर योजना बनाते समय जिन सूचनाओं की आवश्यकता हो, प्राप्त कर लिया जाता है। यदि खसरा के निर्धारित सभी कालमों की सूची एक बार कम्प्यूटर में फिट कर दी जाए तो निचले स्तर पर फसलों में होने वाली हेरा-फेरी को रोका जा सकता है।

हमारा देश वस्तुतः कृषि प्रधान देश है जिसमें 1.87 करोड़ आपरेशनल खाते हैं। इनमें से 1.36 करोड़ खाते एक हेक्टेयर से छोटे हैं जो इस बात का संकेत है कि छोटे काश्तकारों का विकास विभिन्न प्रकार की आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक सहायता की आवश्यकता है। प्रत्येक गांव में परिवार रजिस्टर्ड किए जाते हैं जिसमें प्रत्येक परिवार के सदस्यों की उम्र, वर्तमान आय के साधन एवं उनके आर्थिक क्रियाकलापों का विवरण होता है। सर्वेक्षण द्वारा तैयार किया गया यह रजिस्टर ग्राम विकास के लिए बहुत आवश्यक होता है। इसी के आधार पर योजनाओं को निर्मित किया जाता है। इसलिए कम्प्यूटर का प्रयोग इस कार्य में वरदान सिद्ध होगा।

वर्तमान में भारत सरकार द्वारा गांवों के उत्थान व उन्नति के लिए अनेक योजनाएं चलाई जा रही हैं जिसमें प्रत्येक जनपद के लाखों गरीब परिवारों को सुविधाएं मुहैया कराकर 'जीने का लक्ष्य' प्रदान करने का परोपकारी कार्य किया जा रहा है। सरकारी योजनाओं का वास्तविक रूप में कितना असर हो रहा है, इस बात की समीक्षा को मैनुअली कहते हैं। किसी भी विकास खंड या जनपद विशेष के गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले सभी परिवारों भूमिहीनों कृषक, मजदूरों तथा लघु एवं सामान्य कृषकों के संबंधी जानकारी को अलग-अलग एकत्र कर उसी रूप में रखा जाए तो वह लाभकारी होगा। कम्प्यूटर की मदद से यह कार्य आसान हो जाएगा कि जिन परिवारों को आर्थिक सहायता दी गई है क्या उसके आधार पर आर्थिक स्थिति में सुधार होता है। यदि नहीं तो इनके लिए और क्या सुविधा वांछित है। किसी परिवार विशेष को किस दिशा में लाभान्वित करने की आवश्यकता है।

ग्रामीण विकास में आवास उपलब्ध कराना एक बहुत बड़ी चुनौती है। इस हेतु इंदिरा आवास योजना, निर्बल वर्ग आवास योजना, हरिजन आवास योजना इत्यादि चलाई गई है जिनमें समय-समय पर परिवर्तन भी किया गया है परन्तु इन योजनाओं का लाभ सही व्यक्तियों को नहीं मिल पा रहा है। इसका कारण यह है कि आधारभूत आंकड़े उपलब्ध नहीं हो पाते हैं। वहीं दूसरी तरफ ग्रामीण स्तर पर चयन प्रक्रियाओं में मनमानी होती है, सो अलग। कम्प्यूटर का प्रयोग इस क्षेत्र की विसंगतियों को दूर करेगा। साथ ही हरियाली पट्टा कार्यक्रम, वृक्षारोपण, गोबर गैस, स्कूल भवन व कृषि उत्पादन के विषय में कम्प्यूटर की कारगर सेवाओं का फायदा मिल सकता है। इसके माध्यम से हम जिला स्तर पर बैठकर ही गांवों के आधारभूत आंकड़े उपलब्ध करा सकते हैं। फिर वहीं से योजनाओं का संचालन कर, सही नीतिबद्ध कार्यशैली विकसित कर सकेंगे। कम्प्यूटर की मदद से हमारा भविष्य उज्ज्वल होगा, गांवों को एक नई विकास की राह मिलेगी, कृषि व्यवस्था व उत्पादन में सुधार होगा। ग्रामीण विकास के लिए तो कम्प्यूटर का प्रयोग वाकई एक वरदान है।

28, शास्त्री कालोनी,
इन्दौर (मध्य प्रदेश)

भारत के ग्रामीण विकास में बाधायें

सूरज सिंह

भारत एक ग्राम प्रधान देश है, जहां की लगभग 76% जनता गांवों में निवास करती है। आज आजादी के 42 वर्षों बाद भी ग्रामीण जनसंख्या को उसकी मूलभूत आवश्यकताएं भी नहीं मिल पाई हैं, बड़ा विचित्र-सा लगता है कि जो क्षेत्र इतने विशाल देश का प्रतिनिधित्व करता है, विभिन्न प्रकार से आर्थिक विकास में योगदान देता है, उसे स्वयं की आवश्यकता पूर्ति में कठिनाई आती है, इसके मूल में यदि देखा जाये तो हम पाते हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक ऐसी समस्याएं हैं जो न केवल ग्रामीण विकास, अपितु सम्पूर्ण देश के विकास में बाधा उत्पन्न कर रही हैं। गांवों में भारत की आत्मा बसती है, इस तथ्य को स्वयं राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने स्वीकार किया। ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास की ओर कोई प्रयास नहीं किया गया हो ऐसी बात नहीं है। समय-समय पर सरकार ने विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से इस दिशा में प्रयास किये हैं, किन्तु यह सहायता कार्यक्रम ऊंट के मुंह में जीरा वाली कहावत को चरितार्थ करते हैं। आज आवश्यकता इस बात की है कि ग्रामीण विकास हेतु जो सहायता दी जाती है वह उचित हो तथा लाभ प्रत्येक उस व्यक्ति को पहुंचना चाहिए जिसके लिए ऐसी सहायता उपलब्ध कराई गई हो। ऐसा करने पर ही समस्त अर्थव्यवस्था का विकास संभव है क्योंकि गांव अर्थव्यवस्था रूपी महल की नींव की ईंट है।

सरकारी कार्यक्रम कहां तक सफल रहे?

आजादी के बाद भारत सरकार ने ग्रामीण विकास की दिशा में कई उल्लेखनीय कदम उठाये हैं और अपनी विभिन्न योजनाओं में ग्राम्य विकास पर ध्यान दिया है। ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए सरकार ने कई योजनाएं क्रियान्वित की हैं। जैसे अक्तूबर 1952 में सामुदायिक विकास कार्यक्रम, इसी प्रकार समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, ट्राइसेम, अन्त्योदय योजना, काम के बदले अनाज योजना तथा जवाहर रोजगार योजना आदि ऐसे कार्यक्रम थे जो निसंदेह भारत की ग्रामीण जनता की निर्धनता व बेरोजगारी को दूर करने के लिए पर्याप्त थे लेकिन इसे अपना दुर्भाग्य ही समझना होगा कि भारतीय गांवों की हालत आज भी ज्यों कि त्यों बनी हुई है। आज भी अधिकांश गांवों में सड़क, बिजली व पानी जैसी मूलभूत समस्याओं का कोई हल नहीं निकाला जा सका है। आंकड़े बताते हैं कि गांवों में गरीबी काफी हद तक दूर की जा चुकी है। 1972-73 में गरीबी की रेखा के नीचे रहने वालों का अनुपात 54% था जो 1977-78 में 51% तथा 1984-85 में लगभग 39.9% था, किन्तु इन आंकड़ों पर ही संतोष कर लेना पर्याप्त नहीं है'' आज सामने कई प्रश्न हैं, जैसे—

(i) क्या आज गांव के प्रत्येक व्यक्ति को रोजगार प्राप्त है?

(ii) क्या प्रत्येक व्यक्ति को उचित शिक्षा प्राप्त है?

(iii) क्या प्रत्येक व्यक्ति की उत्पादकता बढ़ाई जा चुकी है?

(iv) गांवों में कितने परिवार ऐसे हैं जिनको उचित स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध हैं?

उपरोक्त प्रश्न कुछ इस प्रकार के हैं जो विभिन्न विकास कार्यक्रमों की सफलता पर प्रश्न चिह्न लगा देते हैं ऐसे में क्या औचित्य है इन कार्यक्रमों का? आज भी भारतीय गांवों में जाकर देखें तो हम पायेंगे कि 21वीं सदी की कल्पना करने वाले भारत को बहुत कुछ करना है। उसे अपने विकास के लिए गांवों की ओर अधिक ध्यान देना होगा। ग्रामीण विकास का क्षेत्र इतना व्यापक है कि उसमें करने को बहुत कुछ है लेकिन इस बात पर बहुत कम ध्यान दिया गया। यही कारण है कि आज भी अर्थव्यवस्था की मुख्य-धुरी (गांव) की समस्या ज्यों की त्यों ही बनी हुई है और विकास में बाधा उत्पन्न हो रही है।

ग्रामीण विकास में बाधाएं

आज भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था कई प्रकार की समस्याओं से जूझ रही है जिनमें शिक्षा, यातायात व संचार, जल विद्युत आदि कई समस्याएं प्रमुख हैं। निम्नलिखित बिन्दु ग्रामीण विकास की बाधाओं पर प्रकाश डालते हैं—

(1) ग्रामीण विकास की बाधाओं में मुख्य बाधा शिक्षा की रही है। कहा जाता है कि शिक्षा एक दर्पण की भांति है। जिसके माध्यम से व्यक्ति या समाज अपनी समस्याओं व परिस्थितियों को समझने व हल करने का प्रयास करता है। आज भारतीय गांवों में अधिकांश लोग निरक्षर हैं। ऐसे में सरकार द्वारा विकास के जो कार्यक्रम

आयोजित किए जा रहे हैं उनका ज्ञान उस व्यक्ति को नहीं हो पाता, जिसके लिए ऐसे कार्यक्रम बनाये गए हों शिक्षा के अभाव में ही ग्रामीणों का प्रत्येक स्तर पर शोषण होता है जिससे उनके विकास में बाधा आती है।

(2) ग्रामीण विकास की समस्या का एक दर्दनाक पहलू यह है कि जो हमारे प्रतिनिधि ग्रामीण अंचलों से चुनकर आते हैं वह भी शहरों में ही रहने लगते हैं। वह अपने बच्चों की शिक्षा-दीक्षा की व्यवस्था भी शहरों में ही करते हैं। वे ग्रामीण विकास की कठिनाइयों में अधिक ध्यान नहीं देते हैं।

(3) सरकार ने ग्रामीण विकास हेतु जो अधिकांश कार्यक्रम बनाये हैं वे केन्द्र या राज्य के बंद कमरों में बैठकर बनाये जाते हैं। हजारों मील दूर ग्रामवासियों के लिए योजनाएं यदि वातानुकूलित कमरों में बनाई जायेंगी तो समाधान कागजों तक तो संभव हो सकता है किन्तु व्यवहार में समस्या ज्यों की त्यों बनी रहने का भय रहता है।

(4) ग्रामीणों की क्रय शक्ति बहुत कम है, कारण कि गांवों में अर्द्धबेरोजगारी, छिपी बेरोजगारी आदि का इतना अधिक बोल-बाला है कि साल के अधिकांश समय तक व्यक्ति खाली बैठा रहता है जिसका प्रभाव उसकी आय, कार्यक्षमता व स्वास्थ्य पर पड़ता है, फलस्वरूप एक गरीब किसान गरीब ही बना रहता है।

(5) ग्रामीण विकास हेतु जो भी योजनाएं सरकार द्वारा चलाई जाती हैं और जितना पैसा विभिन्न योजनाओं हेतु स्वीकृत किया जाता है उसका आधा भाग भी ग्रामीणों को नहीं मिल पाता है।

(6) ग्रामीण विकास के पिछड़ेपन का एक कारण रहा है—ग्रामीण क्षेत्रों का औद्योगिकीकरण से दूर रहना। आज गांवों में उद्योग-धन्धों का अभाव है जबकि लघु व कुटीर उद्योग-धन्धों की संभावनाएं मौजूद हैं, किन्तु इस पर बहुत कम ध्यान दिया जाता है। ग्रामीण लोग मुख्यतया कृषि पर ही आधारित हैं। उद्योगों को सहायक कार्य के रूप में नहीं अपनाया गया है।

(7) भारत के अधिकांश गांवों में आज भी स्वास्थ्य सुविधा, बैंकिंग, यातायात व संचार आदि जैसी आधारभूत सुविधाओं का अभाव है। इन सबके होते हुए विकास नहीं हो सकता।

(8) ग्रामीण विकास में एक बाधा यह भी है कि आज भी लोग विभिन्न प्रकार की परम्परागत रूढियों व अंधविश्वासों के साथ जी रहे हैं। अनावश्यक रूप से भारी धनराशि ऐसे कार्यों पर व्यय कर दी जाती है जिनका वास्तव में कोई औचित्य नहीं है।

(9) ग्रामीण जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि भी एक समस्या रही है, जिससे उत्पादकों की तुलना में उपभोक्ता अधिक हो जाते हैं। प्रतिवर्ष अतिरिक्त जनसंख्या के लिए विभिन्न सुविधाएं जुटानी पड़ती हैं जो एक कठिन कार्य है।

सुझाव

(1) ग्रामीण विकास का विचार करते समय एक बार गांधीजी ने कहा था कि "गांवों के लोग अच्छी शिक्षा प्राप्त कर लेते हैं और गांव छोड़कर शहर में जा बसते हैं" अतः जब तक यह लोग योग्यता प्राप्त करने के उपरान्त भी गांवों में नहीं रहेंगे, ग्राम्य विकास के विषय में नहीं सोचेंगे तब तक ग्राम विकास संभव नहीं है। यदि यह लोग गांवों में ही रहेंगे तो गांव में शिक्षा, रहन, सहन स्वास्थ्य तथा अन्य महत्वपूर्ण तथ्यों की ओर ध्यान देंगे जिससे विकास को बल मिलेगा।

(2) ग्रामीण विकास के लिए यह भी आवश्यक है कि जो योजनाएं बनाई जाती हैं केन्द्र व राज्य के बंद कमरों में नहीं बल्कि स्थानीय जनता के बीच में रहकर बनाई जायें, पंचायत राज्य प्रणाली इस संदर्भ में महत्वपूर्ण कदम है।

(3) ग्रामीण निरक्षरता को दूर करने हेतु यदि एक शिक्षक व्यक्ति एक अशिक्षित व्यक्ति को साक्षर करने का व्रत रखे तो देश से निरक्षरता मिटाई जा सकती है।

(4) गांवों में लघु व कुटीर उद्योगों का विकास किया जाना चाहिए जिनमें कि स्थानीय आवश्यकताओं की वस्तुएं निर्मित की जा सकती हैं, इससे ग्रामीणों को अतिरिक्त समय में रोजगार मिल सकेगा जिससे उनकी आय में वृद्धि होगी।

(5) जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों का कर्तव्य है कि वे गांवों की मूल समस्याओं का बराबर अध्ययन करते रहें तथा उनके समाधान हेतु ग्रामीण स्तर पर ही सरकार द्वारा इन्हें दूर करने का प्रयास करें।

(6) कृषि कार्य में लगे लोगों को अपनी गतिविधियों को कृषि संसाधन की गतिविधियों से जोड़ने तथा और अधिक आय देने वाली फसलों को उगाकर अन्य कृषि गतिविधियों पर भी ध्यान देना चाहिए।

इस प्रकार निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि ग्राम प्रधान अर्थव्यवस्था होने के नाते भारतीय अर्थव्यवस्था का विकास बहुत कुछ भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास पर निर्भर करता है। गांव अर्थव्यवस्था रूपी वृत का केन्द्र बिन्द है। अतः वृत की परिधि (अर्थव्यवस्था) की सम्पष्टता के लिए केन्द्र (गांव) का मजबूत होना आवश्यक है। ग्रामीण विकास के लिए जो कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं मात्र उन पर संतोष करना पर्याप्त नहीं है। अपितु यह भी देखना होगा कि कार्यक्रम का लाभ प्रत्येक उस व्यक्ति तक पहुंच पा रहा है या नहीं जिनके लिए इस प्रकार के कार्यक्रम संचालित किये जा रहे हैं। इसके लिए मूल्यांकन पर बल देना होगा साथ ही ग्रामीणों को चाहिए कि वे सरकार द्वारा चलाये जाने वाले कार्यक्रमों के प्रति जागरूक हों। इसके लिए जागरूकता आवश्यक है। स्थानीय कार्यकारी दल, नवयुवक मण्डल, विकास समितियां भी इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं। तात्पर्य यह है कि आज भारतीय ग्राम्य अर्थव्यवस्था में कई प्रकार की समस्याएं मौजूद हैं जिनका शीघ्र ही निदान करना आवश्यक है।

8 बी. 9, प्रताप नगर,
टोंक फाटक, जयपुर-302015

बंजारे आज भी खानाबदोश हैं

दिल्ली : 31 दिसम्बर, 1990, भारत के बंजारे बड़ी संख्या में आज भी खानाबदोश हैं। वे शहरों से दूर अपने टांडों में रहते हैं तथा मजदूरी या छोटा-मोटा धंधा करके अपना पेट पालते हैं। इनके पूर्वज कई वर्ष पूर्व अपनी जन्मभूमि छोड़कर गए और पश्चिमी देशों में आज भी संघर्षों से जूझ रहे हैं। ये तथ्य यायावर शास्त्री तथा साहित्यकार डा. श्याम सिंह शशि ने दिल्ली में दो दिवसीय बंजारा मेले के अवसर पर आयोजित गोष्ठी में अपने अध्यक्षीय भाषण में प्रकट किए। उन्होंने बताया कि बंजारों की संख्या लगभग चार करोड़ है तथा उनके टांडे लगभग 60 हजार हैं। गोष्ठी में दिल्ली विश्वविद्यालय के नृ-विज्ञान विभाग के अध्यक्ष प्रो. इन्द्रपाल सिंह, डा. दुर्गा दास मुखोपाध्याय, डा. जयपाल तरंग तथा अन्य विद्वानों ने बंजारों की समस्याओं तथा उत्थान पर अपने विचार प्रकट किए। □

ग्रामीण औद्योगीकरण

मृदुला रानी

भारत गांवों का देश है। इसलिए देश की अर्थव्यवस्था के विकास का प्रयास गांवों से ही प्रारम्भ हो परन्तु गांवों में गरीबी, बेकारी, निरक्षरता, जीवन यापन का निम्न स्तर और बीमारियां भयानक रूप धारण कर रही हैं। यदि इन समस्याओं पर समय पर रोक नहीं लगायी गयी तो इनका स्वरूप इतना विकराल हो जायेगा कि उस पर नियंत्रण पाना और कठिन हो जायेगा। इन सभी आर्थिक समस्याओं का एकमात्र उपाय ग्रामीण औद्योगीकरण है।

ग्रामीण औद्योगीकरण का महत्व

प्रो. डी. आर. गाडगिल का ग्रामीण औद्योगीकरण के बारे में कहना है कि "मैं ग्रामीण औद्योगीकरण को आर्थिक विकास योजना का एक प्रमुख आर्थिक एवं सामाजिक उद्देश्य मानता हूं। अतः इसमें सफलता तभी प्राप्त हो सकती है जब पूर्ण विकास योजना और खासतौर से औद्योगीकरण की योजना इस लक्ष्य प्राप्ति को ध्यान में रखकर बनाई जाए। वर्तमान उपागम और ग्रामीण औद्योगीकरण के क्षेत्र में किए गए काम के प्रयासों से शीघ्र कोई ठोस परिणाम नहीं निकल सकता है। दीर्घ स्तरीय उद्योग से सम्बन्धित आज की नीति कालांतर में हमें असंतुलित पूंजी प्रधान आधुनिक उद्योगों की ओर ले जाएगी तथा गरीबी और उद्योग रहित ग्रामीण क्षेत्र वैसे के वैसे रह जाएंगे। मैं मानता हूं कि ग्रामीण औद्योगीकरण का लक्ष्य देश में विकेन्द्रित आधार पर और लघु-स्तर पर उच्च रोजगार प्रभविष्णुता मुक्त ऐसी प्रतियोगी तकनीक प्राप्त करना है जो विकास की आवश्यकताओं को पूरा कर सके।" योजना के संबंध में आज के ज्ञान और प्रौद्योगिकी से इस समस्या का शीघ्र कोई समाधान नहीं मिल सकता है। अतः इस मार्ग पर धीरे-धीरे चलना चाहिए।

भारत में 5,70,000 गांव हैं जिनमें कुल आबादी का 80 प्रतिशत भाग रहता है और उसमें से 70 प्रतिशत कृषि पर अपनी आजीविका के लिए निर्भर है। लेकिन आज की स्थिति में कृषि द्वारा अधिक रोजगार का सृजन असम्भव लग रहा है, क्योंकि ज्यादातर जोतें 2 एकड़ से कम वाली हैं। छोटे और लघु किसानों की इन छोटी जोतों के लिए सिंचाई सुविधाएं प्रदान कर कृषि की गतिविधियों को तेज किया जाए तो भी केवल 15 प्रतिशत श्रम शक्ति को ही काम दिया जा सकता है और बेकारों का महासागर जैसे का वैसे ही बना रहेगा। देश के औद्योगीकरण की आज की अजीब परिस्थिति ने लोगों में नैराश्य की भावना पैदा कर दी है। कृषि और उद्योग के बीच का पुराना संतुलन नष्ट हो गया है। ग्रामीण जनता यह महसूस कर रही है कि उद्योग नष्ट हो रहे हैं और रोजगार का कोई पर्याप्त स्रोत उपलब्ध नहीं है जिसके परिणामस्वरूप कृषि पर निर्भरता और भूमि पर बोझ बढ़ता जा रहा है। अंततोगत्वा शहर तो समृद्ध बने हैं लेकिन ग्रामीण क्षेत्र गरीबी में वैसे ही डूबा हुआ है।

कारण

इस स्थिति में ग्रामीण औद्योगीकरण भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए निम्नलिखित कारणों से अत्यन्त महत्वपूर्ण है—

1. ग्रामीण उद्योगों की स्थापना से कृषि पर श्रम के भार में कमी हो सकेगी,
2. ग्रामवासियों की उत्पादकता में उल्लेखनीय वृद्धि होगी,
3. रोजगार के नये अवसरों का सृजन होगा,
4. राष्ट्रीय आय में ग्रामीण क्षेत्र के अंश में वृद्धि हो सकेगी,
5. ग्रामवासियों के जीवन-स्तर में सुधार हो सकेगा,
6. रोजगार की तलाश में गांवों से नगरों की ओर जाने वाले व्यक्तियों की संख्या में कमी होगी,
7. ग्रामीण क्षेत्र का सर्वांगीण विकास होगा और
8. देश के सन्तुलित विकास में सहायता मिलेगी।

अपेक्षा

यह स्पष्ट है कि ग्रामीण उद्योगों द्वारा देश में विकास की गति को तीव्र किया जा सकता है और विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों को तेजी से प्रगति के रास्ते पर अग्रसर किया जा सकता है परन्तु यह कार्य इतना सरल नहीं है जितना प्रतीत होता है वस्तुतः ग्रामीण औद्योगीकरण एक बहुत जटिल प्रक्रिया है और इसके लिए सुविचारित योजनाओं का निर्माण करना होगा।

ग्रामीण औद्योगीकरण की प्रत्येक योजना का सर्वप्रमुख उद्देश्य एक विशिष्ट क्षेत्र में निवासियों की कुशलता और आवश्यकता के अनुसार आधुनिक विज्ञान व प्रौद्योगिकी द्वारा

विकसित ग्रामीण उद्योगों की स्थापना करना होना चाहिए जिनमें स्थानीय संसाधनों का अधिकतम प्रयोग हो सके। इस संबंध में दूसरा महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि ग्रामीण औद्योगीकरण किया जाना चाहिए। यह क्षेत्रीय ग्रामीण औद्योगीकरण योजना से सम्बन्धित क्षेत्र की आवश्यकताओं, संसाधनों की उपलब्धि तथा वहां के निवासियों की कुशलता एवं रुचियों के आधार पर बनी होनी चाहिए।

ग्रामीण औद्योगीकरण की इस क्षेत्रीय योजना को बड़ी सावधानी से बनाना होगा। सर्वप्रथम इसके लिए सम्बंधित क्षेत्र का गहन सर्वेक्षण करना होगा। इस सर्वेक्षण का उद्देश्य सम्बन्धित क्षेत्र में विद्यमान संसाधनों, पारम्परिक कौशल, निवासियों की आवश्यकताओं व रुचियों तथा बाजार की उपलब्धि का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। इसके साथ-साथ इस सर्वेक्षण द्वारा सम्बद्ध क्षेत्र में स्व-रोजगार तथा नये रोजगार अवसरों की संभावनाओं को तथा रोजगार निर्देशन की सुविधाओं का ज्ञान भी प्राप्त करना होगा। इन एकत्रित सूचनाओं के आधार पर क्षेत्र विशेष के लिए ग्रामीण उद्योगों की योजना का सृजन किया जा सकता है।

संसाधनों का स्वरूप

ऐसी योजना का निर्माण करते समय योजनाकारों को निम्नलिखित तथ्यों पर विशेष रूप से विचार करना होगा। ग्रामीण औद्योगीकरण की किसी भी योजना को बनाते समय सर्वाधिक ध्यान उस क्षेत्र में विद्यमान संसाधनों के स्वरूप पर दिया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए संसाधनों के स्वरूप के अन्तर्गत आये क्षेत्र की निम्नलिखित विशिष्ट जानकारियां प्राप्त की जानी चाहिए—

1. क्षेत्र में बोई जाने वाली फसलें जैसे गेहूं, धान, चना, गन्ना, सरसों, मूंगफली, कपास आदि।
2. वहां पाये जाने वाले वनोपज जैसे जलाऊ लकड़ी, इमारती लकड़ी, बांस, बेंत व अन्य कच्चा माल।
3. क्षेत्र में विद्यमान खनिज जैसे पत्थर, चूना, बालू आदि
4. सम्बद्ध क्षेत्र में पाये जाने वाले अन्य कच्चे माल जैसे चमड़ा और
5. वहां बिजली, पानी, सड़क आदि की उपलब्धि।

पारम्परिक कौशल

ग्रामीण उद्योगों की प्रत्येक योजना के लिए यह भी आवश्यक है कि उसका निर्माण करते समय रोजगार को क्षेत्र विशेष में उपलब्ध पारम्परिक कौशल की पूरी जानकारी प्राप्त हो। हमारे देश के ग्रामीण क्षेत्रों में बढ़ईगीरी, कुम्हारी, लोहारी, वास्तुकारी, चर्मकारी जैसे कार्यों में कुशल व्यक्तियों की संख्या बहुत अधिक है परंतु इन व्यवसायों से जुड़े करीगरों की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है और इनमें से अधिकांश इन व्यवसायों को त्याग कर भूमिहीन कर्मिक की स्थिति में पहुंच गए हैं। इनके विषय में पूर्ण जानकारी प्राप्त करने के बाद ही ग्रामीण औद्योगीकरण की ऐसी योजना बनाई जा सकती है जिसके न केवल इन कारीगरों के कौशल का प्रयोग उत्पादन में वृद्धि करने के लिए किया जा सकेगा वरन् उनकी उत्पादकता बढ़ाकर उनकी आर्थिक स्थिति को भी बेहतर बनाया जा सकेगा।

बाजार की उपलब्धि

ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योगों की स्थापना की किसी भी योजना में सफलता सुनिश्चित करने के लिए संसाधनों के स्वरूप और पारम्परिक कौशल के ज्ञान के साथ बाजार की उपलब्धि का ज्ञान होना भी आवश्यक है। इसलिए ग्रामीण औद्योगीकरण की योजना बनाते समय योजनाकार को सम्बद्ध ग्रामीण क्षेत्र में निकटवर्ती ग्राम समूह में और पास के नगर में विद्यमान बाजारों का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए। इसके साथ ही बाजार को ग्रामीण क्षेत्र से जोड़ने वाली सड़कें, परिवहन के साधनों के माध्यमों का ज्ञान भी एक व्यावहारिक योजना का निर्माण करने के लिए आवश्यक है।

ग्रामीण औद्योगीकरण की योजना के निर्माण के लिए उपरोक्त जानकारी प्राप्त कर लेने के बाद ग्रामीण योजनाकार को निम्नलिखित निर्णय लेने होंगे—

उद्योगों का स्वरूप

गांवों में उद्योगों के विकास की योजना बनाते समय क्षेत्र विशेष में स्थापित किए जाने वाले उद्योग के स्वरूप के विषय में अत्यन्त सावधानी से निर्णय लेना होगा। स्पष्टतः यह निर्णय क्षेत्र में कच्चे माल और कौशल की उपलब्धि के साथ-साथ अन्य संसाधनों की उपस्थिति के आधार पर किया जाएगा। उदाहरण के लिए यदि किसी क्षेत्र में एक विशेष प्रकार का कच्चा माल बहुत बड़ी मात्रा में उपलब्ध है तो उससे जुड़े उद्योग की अपेक्षाकृत बड़ी इकाई की स्थापना का निर्णय लिया जा सकता है। इसके विपरीत थोड़ी मात्रा में उपलब्ध कच्चे माल के प्रयोग के लिए अपेक्षाकृत छोटी इकाइयों की स्थापना के पक्ष में निर्णय लिया जाएगा। इस प्रकार कच्चे माल, कौशल व अन्य संसाधनों की उपलब्धि के आधार पर ग्रामीण क्षेत्र में धान कूटना, गुड़, खाण्डसारी का उत्पादन करना, तेल पेरना, हथकरघों पर कपड़े तैयार करना, निवाड़ बुनना तथा हस्तकला पर आधारित औद्योगिक क्रियाओं जैसे दस्तकारी,

कुम्हारी, ईंट बनाना, बीड़ी बनाना आदि से जुड़े समस्त अथवा थोड़े-से उद्योगों की स्थापना के लिए निर्णय करना होगा। कच्चे माल की उपलब्धता के साथ-साथ उद्योग के स्वरूप का निर्णय करते समय उत्पाद की मांग की स्थिति पर भी विचार करना होगा। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि क्षेत्रीय कौशल सर्वेक्षण के साथ-साथ बाजार का ध्यान रखते हुए ग्रामीण क्षेत्र में स्थापित किए जाने वाले उद्योग के स्वरूप के सम्बन्ध में निर्णय करना होगा।

तकनीक का चयन

ग्रामीण औद्योगीकरण की योजना के निर्माण में एक अन्य महत्वपूर्ण निर्णय ग्रामोद्योग में प्रयुक्त होने वाली तकनीक के सम्बन्ध में करना होगा। इस समय दो प्रकार की तकनीक प्रचलन में है—प्रथम तकनीक को परम्परागत तकनीक कहा जा सकता है जिसमें श्रम का प्रयोग अपेक्षाकृत अधिक होता है परन्तु इसकी कार्य कुशलता और अर्थक्षमता संदिग्ध है। दूसरी तकनीक अत्याधुनिक और पूंजी प्रधान तकनीक है जिसमें श्रम का कम प्रयोग होता है परन्तु कार्य कुशलता और अर्थक्षमता की दृष्टि से यह तकनीक श्रेष्ठ है। यदि इन दोनों तकनीकों पर विचार करें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि न तो परम्परागत तकनीक और न ही आधुनिक पूंजी प्रधान तकनीक ग्रामीण उद्योगों के लिए उपर्युक्त है। वास्तव में ग्रामीण भारत में ऐसी तकनीक की कार्य कुशलता और अर्थक्षमता हो। अतः पारम्परिक तकनीक को आधुनिक वैज्ञानिक ज्ञान और प्रौद्योगिकी की सहायता से अधिक कार्य कुशल, सक्षम बना कर प्रयुक्त करना है। इसलिए ग्रामीण क्षेत्र में प्रारम्भ में उन औद्योगिक क्रियाओं को प्रोत्साहित करना होगा जो सामान्य कौशल से चलाई जा सकें, यदि आवश्यक हुआ तो इस सदंर्भ में कुशलता बढ़ाने के लिए अल्पकालीन व्यावहारिक प्रशिक्षण की व्यवस्था भी की जानी चाहिए परन्तु इसके साथ-साथ ग्रामीण उद्योगों में तकनीक के गुण स्तर को ऊंचा उठाने के लिए एक समयबद्ध योजना भी बनानी चाहिए ताकि धीरे-धीरे पारम्परिक तकनीक विज्ञान की सहायता से अधिक कार्य कुशल तथा आर्थिक दृष्टि से सक्षम बनाया जा सके। यह समयबद्ध तकनीक सुधार कार्यक्रम भी बहुत आवश्यक है क्योंकि इसकी अनुपस्थिति में ग्रामीण उद्योगों में उपभोक्ता की मांग और रुचियों के अनुरूप उत्पादन करने की क्षमता उत्पन्न न हो सकेगी और फलस्वरूप उत्पाद की बिक्री नहीं होगी। अन्ततः ग्रामीण औद्योगीकरण की सम्पूर्ण योजना ठप हो जाएगी। यही कारण है कि ग्रामीण औद्योगीकरण की योजना में प्रयोग की जाने वाली तकनीक के सम्बन्ध में निर्णय करते समय इसमें भावी विकास का कार्यक्रम भी बनाना होगा।

अपरिहार्य

ग्रामीण औद्योगीकरण के उपरोक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह एक जटिल कार्य है। अतः इसकी एक उपयुक्त योजना बना कर लागू करने के लिए संस्थागत सहयोग नितान्त आवश्यक है। जिला उद्योग केन्द्र, तकनीकी संस्थाएं, स्वयं सेवी संस्थाएं, व्यापारिक बैंक, व्यवसाय प्रबन्ध संस्थान, ग्रामीण विकास संस्थान, पंचायती राज संस्थाएं तथा राजकीय अभिकरणों को समन्वित रूप से यह कार्य योजना आयोग के निर्देशन में करना होगा तभी सफलता प्राप्त हो सकेगी। इन संस्थाओं द्वारा ग्रामीण क्षेत्र में आर्थिक क्रियाओं को प्रारंभ करने, उपयुक्त तकनीक का विकास करने, कच्चे माल की रियायती दरों पर आपूर्ति करने, आसान शर्तों पर ऋण उपलब्ध कराने, ग्रामीण कारीगरों को आवश्यक प्रशिक्षण प्रदान करने की व्यवस्था कराने तथा तैयार उत्पादों का विक्रय कराने जैसे महत्वपूर्ण पक्षों पर अत्यधिक योगदान किया जा सकता है।

इस दिशा में सरकार ने अनेक महत्वपूर्ण कदम उठाये हैं। अनेक संस्थायें जैसे खादी और ग्रामोद्योग आयोग, लघु उद्योग विकास संगठन, अखिल भारतीय हथकरघा बोर्ड आदि इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य कर रही हैं। यद्यपि यह कार्य अत्यन्त प्रशंसनीय है तथापि पर्याप्त नहीं है। सबसे विशेष बात तो यह है कि ग्रामीण औद्योगीकरण के जो प्रयास किए जा रहे हैं वे किसी योजना के अनुरूप न होकर तदर्थ रूप में किए जा रहे हैं। अतः आज की आवश्यकता यह है कि ग्रामीण औद्योगीकरण की एक सुविचारित योजना बनाई जाए जो प्रत्येक क्षेत्र की परिस्थितियों के अनुसार तैयार की जाए। इसके लिए यह भी हो सकता है कि सरकार द्वारा प्रत्येक जिले में एक जिला ग्रामीण औद्योगीकरण अभिकरण स्थापित किया जाए। जिसमें इस कार्य से जुड़े राजकीय कर्मचारियों के साथ-साथ जिले में लीड़ बैंक, स्वयं सेवी संस्थाओं, प्रौद्योगिकी संस्थानों, ग्राम विकास संस्थानों, प्रसार कार्यकर्ताओं, पंचायत राज संस्थाओं तथा जनता के प्रतिनिधियों को भी रखा जाए। यह अभिकरण ग्रामीण औद्योगीकरण की जिला स्तर पर योजना बनाये तथा उन्हें पूर्ण निष्ठा एवं ध्यान के साथ लागू करें। ऐसा होने पर ही हमारे देश के ग्रामीण क्षेत्रों का पूरी तरह से विकास हो सकेगा तथा भारत के कुटीर और ग्रामोद्योग अपना खोया हुआ गौरव पुनः प्राप्त कर सकेंगे।

अर्थशास्त्र विभाग
गोरखपुर विश्वविद्यालय
गोरखपुर (उ. प्र.)

ग्रामीण-विद्युतीकरण के बढ़ते चरण

नीलम गुप्ता
ए. के. पाण्डेय

देश के आर्थिक विकास, प्रगति व सामाजिक जीवन स्तर में ऊर्जा की उपलब्धता का विशेष महत्व है। विद्युत, ऊर्जा का वाणिज्यिक स्रोत है तथा ऊर्जा की सबसे सुविधाजनक व उपयोगी किस्म है। कृषि क्षेत्र व औद्योगिक क्षेत्र में इसका विशेष योगदान है। विद्युत की खपत की मात्रा देश में उत्पादकता की विकास दर की सूचक होती है तथा आर्थिक विकास की अनवरत प्रक्रिया को संचालित करने एवं उसे गति प्रदान करने में ऊर्जा एवं शक्ति के स्रोत उत्प्रेरक संसाधन सिद्ध होते हैं। यद्यपि देश एवं प्रदेश में ऊर्जा के अनन्य पारंपरिक स्रोत विद्यमान हैं किन्तु इन पारंपरिक स्रोतों की तुलना में विद्युत शक्ति एवं ऊर्जा देश व प्रदेश की आर्थिक प्रगति में अधिक प्रमाणिक एवं लाभदायक सिद्ध होती है। संभवतः इसी कारण देश एवं प्रदेश की पंचवर्षीय योजनाओं में विद्युत शक्ति के विकास को प्राथमिकता के आधार पर स्वीकार किया गया है, तथा पंचवर्षीय योजनाओं के बाद से विद्युत उत्पादन कार्यक्रमों में बहुत तेजी आई है।

ग्रामीण विद्युतीकरण से आशय ग्रामों में विद्युत पहुंचाने एवं कृषि हेतु सिंचाई पंपों के माध्यम से पानी पहुंचा कर कृषि उत्पादन में वृद्धि करने से है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत ग्रामों में महत्वपूर्ण उत्पादन परिवर्तनों की एक श्रृंखला का आविर्भाव होता है। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत वे समस्त परिवर्तन सम्मिलित होते हैं जो किसी उपक्रम के मशीनीकरण, किसी नवीन उद्योग की स्थापना इत्यादि के फलस्वरूप घटित होते हैं। इस प्रकार यह वह प्रक्रिया है जो ग्रामीण क्षेत्र के समुचित विकास को गति प्रदान करती है।

मध्यप्रदेश की अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार कृषि है, अतः प्रदेश के तीव्र आर्थिक विकास के लिए इस क्षेत्र का विकास किया जाना अति आवश्यक है। चूंकि प्रदेश में कृषि की मानसूनी निर्भरता व अनिश्चितता के कारण अति दयनीय दशा है अतः कृषि क्षेत्र का समुचित विकास तभी किया जा सकता है जबकि इस क्षेत्र में सिंचाई व अन्य सुविधाओं के विस्तार के लिए विद्युतीकरण का आश्रय लिया जाए। ग्रामीण क्षेत्रों में विद्युत शक्ति का विस्तार जहां एक ओर कृषि के आधुनिकीकरण के लिए आवश्यक अधिसंरचना के निर्माण में मदद करता है वहीं दूसरी ओर कृषि आधारित उद्योगों व व्यवसाय के विकास के लिए एक अनिवार्यता है। कृषि के लिए विद्युत की उपलब्धता कृषि को आजीविका के एक साधन के स्थान पर एक व्यवसाय के रूप में स्वीकार करने की प्रेरणा प्रदान करती है तथा आंतरिक स्रोतों का उपयोग करते हुए उसे आत्मनिर्भर बनाने में सहायक होती है। वर्तमान समय में प्रदेश में ग्रामीण विद्युतीकरण की दिशा में कदम उठाए गए हैं। इन प्रयासों का मूल्यांकन तथा निहित समस्याओं के समाधान के उपाय प्रस्तुत करना प्रस्तुत लेख का उद्देश्य है।

मध्यप्रदेश की उत्पादन व्यवस्था का केन्द्र स्थल ग्राम है। अतः प्रादेशिक सरकार ने ग्रामीण-विद्युतीकरण के आयोजन की नवीन नीति अपनाई है तथा ग्रामीण विद्युतीकरण की नीतियों की व्यावहारिकता के परिणामस्वरूप यह ग्रामीण क्षेत्रों के आर्थिक उन्नयन एवं ग्रामीण वातावरण का कायाकल्प करने में प्रेरक संसाधन के रूप में प्रकट होने लगा है। विद्युत शक्ति के उत्पादन व वितरण की प्रकृति कुछ विशिष्टता लिए हुए है वस्तुतः इस क्षेत्र में गहन पूंजी निवेश उसकी उत्पादकता व लाभ की मात्रा से अधिक प्रभावित नहीं होता अपितु सामाजिक कल्याण व जन-सुविधाओं के विस्तार से अधिक प्रभावित होता है। ग्रामीण समुदाय के अधिकतम कल्याण हेतु प्रदेश में विद्युत उत्पादन क्षमता के विस्तार तथा उसके वितरण में समानता व सामाजिक न्याय की स्थापना का सुदृढ़ प्रयास किया गया है। शासकीय प्रयासों के निर्धारित लक्ष्यों के अनुरूप ग्रामीण अर्थव्यवस्था के उन्नयन तथा ग्रामीण आय व जीवन-स्तर पर होने वाले प्रभावों का मूल्यांकन करने का प्रयत्न भी प्रस्तुत लेख में किया गया है।

उल्लेखनीय है कि भारत के विभिन्न राज्यों की तुलना में विद्युत शक्ति के उत्पादन, उपभोग व वितरण में मध्यप्रदेश

अग्रणी है। यद्यपि प्रदेश में विद्युत उत्पादन का इतिहास अधिक प्राचीन नहीं है अपितु यह 20वीं शताब्दी के प्रारंभिक चरण की देन है। प्रदेश में विद्युत उत्पादन केन्द्र की प्राथमिक इकाई 1905 में स्थापित की गई किन्तु 25 वर्षों की अवधि में भी इसका समुचित विकास नहीं हो सका तथा 1930 तक मात्र 10 विद्युत-केन्द्र स्थापित किए जा सके। विद्युत ऊर्जा के विकास के लिए सर्वप्रथम सरहेनरी हावर्ड ने वृहत् योजना निर्मित की। वित्त की स्वीकारोक्ति के पश्चात् 1950 में 'मध्यप्रदेश विद्युत मंडल' का गठन किया गया जिसे 1952 में स्वतंत्र प्रभार सौंप दिया गया। उत्पादन की प्रारंभिक अवस्था में स्थापित केन्द्रों की समग्र उत्पादन क्षमता 1630.5 मेगावाट थी तथा 1956-57 तक मात्र 164 गांव तथा 2000 पंपों को विद्युत की सुविधा प्राप्त हो सकी थी।

1956 में नए मध्यप्रदेश के गठन के पश्चात् प्रदेश में विद्युत ऊर्जा के उत्पादन केन्द्रों तथा स्थापित क्षमता का उत्तरोत्तर विकास होता गया। वर्तमान में प्रदेश में विद्युत उत्पादन केन्द्रों की कुल स्थापित क्षमता 3368.5 मेगावाट है जिसका 83.79 प्रतिशत तापीय-विद्युत तथा 16.21 प्रतिशत पनबिजली के रूप में उपलब्ध है। प्रदेश में विद्युत उपभोक्ताओं की कुल संख्या वर्ष 1979-80 में 15, 93, 185 थी जो कि 1988-89 में 45,18,506 हो गई। 1979-80 में विद्युत उपभोग की मात्रा 4.3 अरब किलोवाट घंटा थी जो वर्ष 1988-89 तक 10.7 अरब किलोवाट घंटा हो गई।

भारत का हृदय-स्थल मध्यप्रदेश आर्थिक संसाधनों से परिपूर्ण होने के बाद भी पूर्ण रूप से विकसित नहीं हो पाया है, अतः दीर्घकाल में शक्ति के विकास उत्पादन व न्यायोचित वितरण की दिशा में ठोस कदम उठाए गए हैं जिससे प्रदेश में स्थित 70,803 ग्रामों को आर्थिक प्रगति की दिशा में उन्मुख किया जा सके। 1979-80 के पूर्व मध्यप्रदेश के कुल 70,803 ग्रामों में से 16,350 ग्रामों में मात्र विद्युत की आपूर्ति की जा सकी थी। इस तरह प्रादेशिक स्तर पर इसका अनुपात 23.09 प्रतिशत था किन्तु 1988-89 के अंत में प्रदेश के 79.03 प्रतिशत ग्रामों का विद्युतीकरण किया जा चुका है। मध्यप्रदेश में पिछले वर्षों में स्थापित विद्युत केन्द्रों तथा पन-विद्युत परियोजनाओं की स्थापित क्षमता की वृद्धि के साथ प्रदेश में ऊर्जा उत्पादन के परिणाम में पर्याप्त प्रगति हुई है वहीं दूसरी ओर 'भारतीय ग्रामीण विद्युतीकरण निगम' से विभिन्न अवधियों में आर्थिक अनुदान प्राप्त होते रहे हैं। अतः प्रदेश के ग्रामीण अंचलों में विद्युत के वितरण में प्रगतिशील लक्ष्य निर्धारित किया है। 'मध्यप्रदेश विद्युत मंडल' द्वारा प्रायः ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकांशतः कृषि व्यवसाय को आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में नलकूप तथा विद्युत पंप की व्यवस्था की जाती है। एक ओर इन क्रियाओं को विद्युत ऊर्जा से संबद्ध करते हुए भूमि के आंतरिक जल स्रोतों का उपयोग किया जाता है वहीं दूसरी ओर पीने योग्य पानी को विभिन्न जल प्रदाय परियोजनाओं के माध्यम से उपभोग आवश्यकता के अनुकूल प्रतिस्थापित किया जाता है। इसके अतिरिक्त प्रकाश की सुविधा हेतु जहां घरेलू व व्यावसायिक प्रतिष्ठानों में विद्युत शक्ति का उपयोग होता है वहीं औद्योगिक केन्द्रों को सक्षमता व गतिशीलता प्रदान करने में ग्रामीण विद्युतीकरण के आयोजन का विशेष महत्व है।

'मध्यप्रदेश विद्युत मंडल' ने ग्रामीण विद्युतीकरण की दिशा में विभिन्न उत्पादक व उपभोग क्रियाओं की आपूर्ति के लिए वार्षिक रूप से जो लक्ष्य निर्धारित किए हैं, विकास कार्यों की प्रारंभिक अवधि में उन्हें आशातीत सफलता नहीं मिल पाई किन्तु कालान्तर में निर्धारित लक्ष्यों कि तुलना में उनकी उपलब्धियां अधिक रही हैं। 'मध्यप्रदेश विद्युत मंडल' द्वारा सिंचाई पंपों हेतु विद्युत प्रदाय योजना के अंतर्गत वर्ष 1979-80 के अंतर्गत 41,000 सिंचाई पंपों के लिए विद्युत प्रदान करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया था जबकि 34,000 सिंचाई पंपों को विद्युत सुविधा प्रदान करने का कार्य पूरा किया जा सका। इस प्रकार उपलब्धियों का अनुपात 84.34 प्रतिशत रहा जबकि वर्ष 1988-89 में 36,350 सिंचाई पंपों को विद्युत प्रदान करने के लक्ष्य के विरुद्ध 43,654 पंपों को विद्युत प्रदान की गई। इस तरह उपलब्धि का अनुपात 120.09 प्रतिशत रहा। प्रदेश में असंबद्ध विद्युत पंपों की संख्या वर्ष 1979-80 में 38,619 थी जबकि 1988-89 में 24,368 रह गई।

वर्ष 1979-80 में 2120 ग्रामों को विद्युतीकृत करने के लक्ष्य के विरुद्ध 2700 ग्रामों को विद्युतीकृत किया गया। इस प्रकार उपलब्धि का अनुपात 127.36 प्रतिशत था एवं वर्षान्त में विद्युतीकृत ग्रामों का प्रतिशत कुल ग्रामों की संख्या (22050) का 31.11 प्रतिशत था। वर्ष 1988-89 में 3350 ग्रामों को विद्युतीकृत करने के लक्ष्य के विरुद्ध 3682 ग्रामों के विद्युतीकरण का कार्य पूरा किया गया। इस प्रकार उपलब्धि का अनुपात 109.9 प्रतिशत रहा एवं इस वर्ष कुल ग्रामों की संख्या (55956) के 79.03 प्रतिशत ग्रामों को विद्युतीकृत किया गया।

इस प्रकार ग्रामीण-विद्युतीकरण से जहां कृषि की प्रति हैक्टेयर उत्पादन में वृद्धि की संभावनाएं बढ़ी हैं वहीं रोजगार के वैकल्पिक अवसरों के निर्माण तथा कृषि क्षेत्र पर जनसंख्या के भार को कम करने के अवसर की संभावना में वृद्धि हुई है। मध्य प्रदेश, जो कि वृहत् ग्रामीण क्षेत्र वाला प्रदेश है, की आर्थिक प्रगति की दिशा ग्रामीण विकास पर केन्द्रित है। अतः

कहा जा सकता है कि ग्रामीण विद्युतीकरण ग्रामीण जनजीवन तथा जीवन-स्तर को ऊंचा उठाने का साधन है जिस पर प्रदेश की त्वरित आर्थिक प्रगति निर्भर है। मध्यप्रदेश में ग्रामीण विद्युतीकरण की प्रक्रिया में कुछ दोष विद्यमान हैं—

1. 'मध्यप्रदेश विद्युत मंडल' द्वारा निर्धारित अवधि तक आयोजन को परिपूर्ण नहीं किया जाता है जो कि द्रुत विकास में बाधक होता है।
2. कृषि को मानसून पर निर्भर रहने के लिए अब भी विवश होना पड़ता है जबकि आंतरिक जल स्रोतों के उपयोग के लिए सिंचाई पंपों की अनुकूल व्यवस्था होती रही है फिर भी ये सिंचाई पंप समय पर विद्युत सुविधा प्राप्त न कर पाने के कारण लाभदायक नहीं हो पाए हैं। अतः कृषि क्षेत्र पर प्राथमिकता के आधार पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है।
3. सामान्यतः प्रदेश के विद्युत केन्द्रों की स्थापित क्षमता तथा विद्युत उत्पादन में पर्याप्त अंतर विद्यमान है जिसे समाप्त करना न केवल आवश्यक है अपितु इसे अनुकूलतम उत्पादन के स्तर तक पहुंचाना भी अनिवार्य है।
4. ग्रामीण विद्युतीकरण नीति के अंतर्गत यद्यपि विभिन्न उपयोगों के लिए विद्युत प्रदान की जाती है किन्तु व्यावसायिक व औद्योगिक उपयोगों को यथोचित प्रोत्साहन नहीं मिल पाया है जबकि कृषि क्षेत्र पर जनसंख्या के भार को कम करने तथा वैकल्पिक रोजगार व्यवस्था की दृष्टि से ऐसा किया जाना आवश्यक है।

सुझाव

प्रदेश में ग्रामीण विद्युतीकरण का मूल उद्देश्य सामाजिक-आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करना तथा सामान्य जन के जीवन स्तर में सुधार लाना है। अतः उद्देश्य की पूर्ति के लिए ग्रामीण विद्युतीकरण हेतु विद्युत ऊर्जा के आयोजन में विभिन्न स्तरों तथा पक्षों का समावेश किया जाना आवश्यक है—

(1) विद्युत ऊर्जा क्षेत्र का अर्थव्यवस्था के अन्य विकास संगठनों एवं संस्थाओं यथा आंतरिक जल स्रोत सर्वेक्षण एवं विकास एजेंसी, ग्रामीण विद्युतीकरण निगम, साख संस्थाएं, राज्य विद्युत मंडलों, कृषि विकास समिति, लघु सिंचाई परियोजना समिति आदि से उचित सामंजस्य स्थापित किए जाएं जिससे आर्थिक विकास को गति मिल सके।

(2) विद्युत ऊर्जा के वितरण में क्षेत्रीय असंतुलन की प्रकृति को न्यूनतम किया जा सके ताकि प्रदेश का संतुलित आर्थिक विकास संभव हो सके।

(3) विद्युत ऊर्जा के उत्पादन में वृद्धि तथा उत्पादन केन्द्रों की स्थापित क्षमता के पूर्ण उपयोग के लिए प्रयास किए जायें।

(4) प्रदेश की अर्थव्यवस्था के अनुकूल न्यून पूंजी गहन उत्पादन प्रणाली की आवश्यकता के अनुरूप बृहत पैमाने की विद्युत उत्पादन इकाइयों के स्थान पर लघु पैमाने की ऊर्जा उत्पादन इकाइयों की स्थापना की जाए।

इस प्रकार यदि उपरोक्त उपायों के क्रियान्वयन के द्वारा मध्यप्रदेश में ग्रामीण विद्युतीकरण के निहित दोषों का निराकरण कर लिया जाता है तो निःसंदेह मध्यप्रदेश भी अन्य राज्यों (केरल, पंजाब, हरियाणा, तमिलनाडु) की भांति न केवल शत-प्रतिशत ग्रामीण विद्युतीकरण के लक्ष्य को प्राप्त कर सकेगा अपितु अपने प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग का अनुकूलतम अवसर निर्मित करते हुए आर्थिक प्रगति की दिशा में दृढ़ आधार निर्मित कर सकेगा।

अर्थशास्त्र विभाग
रविशंकर विश्वविद्यालय
रायपुर, मध्य प्रदेश-492010

राष्ट्र निर्माण में अग्रणी लाला लाजपतराय

प्रस्तुति : राकेश शर्मा

"लाजपतराय तो एक संस्था थे। अपनी जवानी के समय से ही उन्होंने देशभक्ति को अपना धर्म बना लिया था और उनके देशप्रेम में संकीर्णता न थी। वह अपने देश से इसलिए प्रेम करते थे कि वह संसार से प्रेम करते थे। उनकी राष्ट्रीयता अन्तर्राष्ट्रीयता से भरपूर थी....उनकी सेवाएं विविध थीं। वे बड़े ही उत्साही समाज और धर्म सुधारक थे....ऐसे एक भी सार्वजनिक आन्दोलन का नाम लेना असंभव है, जिसमें लालाजी शामिल न थे, सेवा करने की उनकी भूख सदा अतृप्त ही रहती थी। उन्होंने शिक्षण-संस्थाएं खोलीं; वे दलितों के मित्र बने; जहां कहीं दुख-दरिद्र हों वहीं वह दौड़ते थे।"

—महात्मा गांधी

लाला लाजपतराय का व्यक्तित्व देशभक्ति, राजनीति, धर्म, शिक्षा, संस्कृति, समाज सुधार आदि विभिन्न महान गुणों से मण्डित रहा। वे सही अर्थों में एक महामानव तथा महान राष्ट्र निर्माता थे। उन्होंने कभी भी किसी प्रकार की आलोचनाओं की चिन्ता नहीं की। वे अपने उद्देश्य पथ पर, आगे बढ़ते जाओ और इसके लिए आलोचनाओं की परवाह मत करो, इसी कार्यप्रणाली में विश्वास करते थे।

लाला लाजपतराय का जन्म फिरोजपुर जिले की मोगा तहसील में एक छोटे-से गांव ढुडीके में 28 जनवरी 1865 को हुआ था। उनके पिता मुंशी राधाकृष्ण अग्रवाल रोपड़ के मिडिल स्कूल में इतिहास और उर्दू के अध्यापक थे। लाला लाजपतराय एक गम्भीर स्वभाव के बालक थे। उन्हें खिलौनों की अपेक्षा पुस्तकों से अधिक प्रेम था। पिता राधाकृष्ण ने उन्हें अक्षर ज्ञान के साथ ही कुरान पढ़ाना भी प्रारम्भ किया। अपने पिता की तरह वह भी बचपन में नमाज पढ़ते थे तथा कभी-कभार रोजा भी रख लेते थे। वे देखते थे कि उनके दादा जैन धर्म को मानते थे, पिता इस्लाम से प्रभावित थे, मां सिख परम्परा की अनुयायी थी और ननिहाल में जाने पर उन्हें वहां पूर्णतया सिख पंथ का बोलबाला दिखाई देता था, अत: बालक लाजपत पर इन सबका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही था। वे बाल्यकाल से ही धर्म के प्रति जिज्ञासु बन गए और रोजा, नमाज आदि का उन्होंने शीघ्र ही परित्याग कर दिया।

लाजपतराय की आरम्भिक शिक्षा उनके पिता की देख-रेख में प्रारम्भ हुई। उनकी माध्यमिक शिक्षा रोपड़ में हुई। अपने पिता की तरह ही लाजपतराय एक मेधावी विद्यार्थी थे। वे प्राय: कक्षा में प्रथम आते थे तथा स्कूल में सबसे कम अवस्था के विद्यार्थी थे। बंगाली अध्यापक उन्हें घर पर ही अंग्रेजी पढ़ाने आते थे। निरन्तर अस्वस्थ रहने पर भी 1880 में उन्होंने पंजाब तथा कलकत्ता दोनों विश्वविद्यालयों की मैट्रिक परीक्षा एक साथ उत्तीर्ण की। दोनों विश्वविद्यालयों की परीक्षा उत्तीर्ण करने का औचित्य यह था कि पंजाब विश्वविद्यालय की तुलना में कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्रमाण पत्रों तथा उपाधियों को श्रेष्ठ समझा जाता था।

मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद उनकी उच्च शिक्षा का प्रश्न सामने आया। उनके पिताजी की आर्थिक स्थिति अत्यन्त सामान्य थी। फिर भी पिताजी ने उच्च शिक्षा के लिए उन्हें लाहौर भेज दिया। फरवरी-मार्च 1881 में उनको लाहौर विश्वविद्यालय में प्रवेश मिला। यद्यपि वे यहां आर्ट्स की इण्टरमीडिएट (एफ. ए.) की पढ़ाई के लिए आए थे, किन्तु उन्होंने इसके साथ ही मुख्तारी परीक्षा की भी तैयारी की, ताकि आजीविका की समस्या भी हल हो जाए। उन्होंने 1885 में कानून की परीक्षा पास की और रोहतक में वकालत शुरू की। सन् 1886 में हिसार नगर पालिका के चुनावों में लालाजी भी प्रत्याशी बने। लालाजी तीन वर्षों तक नगर पालिका के सदस्य तथा अवैतनिक मंत्री रहे।

जब 1888 में इलाहाबाद में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ, तभी से लाला लाजपतराय का राजनीतिक जीवन शुरू हुआ। उन्होंने अपनी अच्छी खासी वकालत छोड़ दी थी क्योंकि उनके सार्वजनिक काम में इससे बाधा पड़ती थी। 1889 के बम्बई अधिवेशन के बाद कांग्रेस के तीन अधिवेशनों में लाला लाजपतराय ने भाग नहीं लिया किन्तु 1893 का अधिवेशन लाहौर में ही हुआ। लालाजी ने इस अधिवेशन में दो-तीन व्याख्यान दिए।

1906 में बंगाल विभाजन का असन्तोष अपने चरम शिखर पर था। सारा देश इस विभाजन को निरस्त करना चाहता था, किन्तु पुराने कांग्रेसी इस असन्तोष को दबाना चाहते थे। कांग्रेस में एक नये दल (गरम दल) का जन्म हो चुका था। लोकमान्य तिलक, लाला लाजपतराय तथा विपिनचन्द्र पाल (लाल, बाल, पाल) इस दल के प्रमुख नेता थे। इस प्रकार 1906 तक आते-आते लाला लाजपतराय गरम रुख अपना चुके थे, अंग्रेजों को भारत से बाहर निकालने के लिए।

जनवरी 1907 में लाला लाजपतराय ने पंजाब में आबकारी की दरें बढ़ाने के खिलाफ किसानों का प्रदर्शन आयोजित किया। ब्रिटिश सरकार ने लालाजी को गिरफ्तार कर लिया और उन्हें बर्मा की मांडले जेल में भेज दिया। यहां लालाजी को भारतीयों के प्रति होने वाले दुर्व्यवहार के कई प्रकार के कटु अनुभव भी हुए। प्रातः काल घूमने के लिए जाते समय लालाजी को जो भी भारतीय मिलता, वह उनसे नमस्कार करता था, इस सामान्य बात के लिए भी भारतीयों को प्रताड़ित किया गया। उनके लिए बाद में वह मार्ग ही बन्द कर दिया गया।

11 नवम्बर 1907 के दिन माण्डले का कमीश्नर, पुलिस अधीक्षक तथा पुलिस उप-अधीक्षक के साथ उनके पास आया और उन्हें अलग ले जाकर बोला, "आपको मुक्त किया जा रहा है, परन्तु आपको पुलिस गार्द लाहौर ले जाएगी और वहां रिहा करेगी। यदि आप फिर कोई राजद्रोहात्मक कार्य करते पकड़े गए तो आपको गिरफ्तार कर लिया जाएगा तथा तत्काल ही निर्वासित कर दिया जाएगा।" लालाजी को 18 नवम्बर 1907 प्रातः साढ़े पांच बजे लाहौर (मियांमीर) स्टेशन पर रिहा कर दिया गया।

1908 में वे इंग्लैंड गए और वहां भारतीय छात्रों को सम्बोधित किया। 1913 में लाजपतराय जापान और अमेरिका भाषण देने के लिए गए। वहां वह गदर पार्टी के नेताओं से मिले और 'इण्डियन होमरूल लीग' की स्थापना की। लालाजी स्वयं उसके अध्यक्ष बने। जनवरी 1918 से होमरूल लीग की एक पत्रिका 'यंग इण्डिया' का सम्पादन प्रारम्भ हुआ। अभी तक भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन का कार्य विदेशों में केवल ब्रिटेन तक ही सीमित था, अब यह कार्य अमेरिका में भी प्रारम्भ हो गया था। अमेरिका के 'न्यू रिपब्लिक' जैसे उदार नीति वाले पत्रों में भी लालाजी के लेख प्रकाशित होते थे। इस प्रकार साधनहीन होने पर भी अमेरिका में भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन पहुंचाकर लालाजी ने एक प्रशंसनीय कार्य कर दिखाया था।

लालाजी की प्रथम साहित्यिक रचना गुरुदत्त की जीवनी थी। इसके पश्चात उन्होंने भारत ही नहीं, विश्वभर के अनेक महापुरुषों की जीवनियां लिखीं। 1895 से 1900 तक लालाजी ने मेजिनी, गैरीबाल्डी, स्वामी दयानन्द, शिवाजी तथा श्रीकृष्ण इन पांच महापुरुषों की जीवनियां लिखीं। 'पंजाबी' नामक पत्र में लालाजी नियमित रूप से लेख लिखा करते थे। 'हिन्दुस्तान टाइम्स' पत्र की स्थापना में भी लालाजी का विशेष योगदान रहा। उनके द्वारा लिखी गई कुछ पुस्तकें ये हैं—यंग इण्डिया, इंग्लैंड्स डैट टू इण्डिया, दि पोलिटीकल फ्यूचर आफ इण्डिया, ग्रेट थाट्स, दि आर्य समाज, आईडियल्ज आफ नान-कोआपरेशन, मैसेज आफ दी भगवत गीता, दि डिप्रेस्ड क्लासिज, स्टोरी आफ माई डिपोरटेशन, अनहैप्पी इण्डिया। लालाजी ने उर्दू में भी रचनाएं लिखीं। उन्होंने एक उर्दू दैनिक 'वन्देमातरम्' भी शुरू किया। उन्होंने अंग्रेजी साप्ताहिक 'पीपुल' का प्रकाशन भी शुरू किया। जो बाद में जनमत का एक शक्तिशाली साधन बन गया। वे देशबन्धु चितरंजन दास और मोतीलाल नेहरू द्वारा स्थापित स्वराज पार्टी के भी सदस्य बने।

लाला लाजपतराय भारतीय स्वाधीनता संग्राम की ऐसी गौरवमयी विभूति हैं, जिनका राजनीति तथा समाज दोनों क्षेत्रों में समान रूप से प्रशंसनीय योगदान रहा है। उन्होंने भारतीय समाज की बहुशः ज्वलंत समस्याओं पर उल्लेखनीय कार्य किया।

अछूतों की समस्या हिन्दुओं की एक बड़ी समस्या थी। इस समस्या के समाधान में 1925 के आरम्भ में लालाजी अछूत वर्ग के सेवाकार्य में जुट गए। पहले ही वर्ष प्रसिद्ध उद्योगपति जुगलकिशोर बिरला ने पांच हजार रुपये प्रतिमास देना स्वीकार किया। बाद में महात्मा गांधी ने भी कांग्रेस के अन्तर्गत अछूतोद्धार का कार्यक्रम प्रस्तुत किया।

लालाजी ने प्राकृति आपदाओं में भी सराहनीय कार्य किए। सन् 1900 में दुर्भिक्ष का प्रकोप हुआ। ऐसे में भोले-भाले तथा भूख की विभीषिका से त्रस्त अनाथ बच्चों को ईसाई मिशनरी ने ईसाई बनाना शुरू कर दिया। विवश देशवासियों का यह अपमानजनक धर्मान्तरण लालाजी को सहन नहीं हुआ। वह इस अनाचार को रोकने के लिए तत्पर तैयार हो गए। उन्होंने लगभग दो हजार अनाथ बच्चों को बचाया। उन्होंने अनेक अनाथालयों की स्थापना की। इन अनाथालयों में लाये गए सक्षम लोगों को स्वावलम्बी बनाने पर विशेष ध्यान दिया गया। उन्हें हाथ से कताई करने का विशेष रूप से प्रशिक्षण दिया गया। सन् 1907-8 में पुनः संयुक्त प्रान्त (उत्तर प्रदेश), उड़ीसा तथा मध्य प्रदेश में अकाल पड़ा। इसमें भी लालाजी ने पूर्ववत् सहायता कार्य किए। सन् 1905 के अप्रैल में वर्तमान हिमाचल के कांगड़ा नामक स्थान पर भयानक भूकम्प आया। उसमें जीवन तथा सम्पत्ति की विशाल हानि हुई। लालाजी उस समय लाहौर में थे। घटना का समाचार सुनते ही लालाजी कांगड़ा पहुंचे तथा भूकम्प पीड़ितों की सेवा में जुट गए।

1925 में लालाजी जेनेवा में सम्पन्न होने वाले अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक सम्मेलन में श्रमिकों के प्रतिनिधि बनकर गए। इस सम्मेलन में लालाजी ने दो महत्वपूर्ण निर्णय करवाए—पहला अमेरिका तथा अफ्रीका के काले हब्शी श्रमिकों की स्थिति की जांच करवाना तथा दूसरा अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक कार्यालय में भारत के स्थायी प्रतिनिधि की नियुक्ति करवाना। लालाजी ने भारत में प्रचलित बेगार प्रथा की कड़ी भर्त्सना की। पंजाब में अनुसूचित जाति के लोगों से बेगार लिए जाने की प्रथा थी, जिसको बन्द करने का कार्य लालाजी के ही प्रयत्नों से हुआ।

1923 में लालाजी जेल में अस्वस्थ थे। उस समय उनके मन में अपनी मां गुलाब देवी की स्मृति में क्षयरोग चिकित्सालय की स्थापना का विचार आया था परन्तु वे अपने जीवन काल में अस्पताल का कार्य पूर्ण न कर सके। उनके निधन के छः वर्ष बाद गांधीजी के लाहौर जाने पर ही इस अस्पताल का उद्‌घाटन हुआ। भारत विभाजन के बाद इस चिकित्सालय की जालन्धर में पुनः स्थापना की गई।

लालाजी ने अपने जीवन में शिक्षा के क्षेत्र में भी अनेक सराहनीय कार्य किए। डी. ए. वी. कालेज लाहौर में उनका विशिष्ट योगदान था। उन्होंने सन् 1911 में पंजाब में एक शिक्षा संघ की स्थापना की। सन् 1911 में ही अपने पिता की स्मृति में उन्होंने अपने जन्मस्थान जगरांव में राधाकृष्ण हाई स्कूल की स्थापना की। भारतीय नवयुवकों को राजनीति की शिक्षा देने के लिए उन्होंने दिसम्बर 1920 में तिलक राजनीति विद्यालय की स्थापना की।

1928 में ब्रिटिश सरकार ने 7 गोरे सदस्यों का एक आयोग बनाया जो भारत में संवैधानिक सुधारों के बारे में सलाह देने आया। सभी राजनीतिक दलों ने इसका काले झण्डों से स्वागत करने का फैसला किया। लाहौर नौजवान भारत सभा के क्रान्तिकारियों ने भी फैसला किया कि 30 अक्तूबर 1928 को इस आयोग के सामने प्रदर्शन किया जाए। प्रदर्शन में इतने लोग इकट्ठे हो गए कि पुलिस उन पर नियंत्रण करने में असमर्थ थी। हालांकि भीड़ पूर्णतया अहिंसक थी, लेकिन पुलिस ने लाठी चार्ज किया। पुलिस उपअधीक्षक जे. पी. साण्डर्स बड़ी निर्ममता से भूखे भेड़ियों की तरह लोगों पर टूट पड़ा। पहला वार लाजपतराय की छाती पर पड़ा। दूसरी लाठी उनके कन्धे पर पड़ी, तीसरी उनके सिर पर लगी। इसके बाद चौथी, पांचवीं, छठी और अनगिनत लाठियां पड़ीं। अनेक लाठियां खाने के बाद भी वे नारे लगाते रहे—"साइमन वापिस जाओ।"

इसी प्रदर्शन की संध्या को लाहौर के मोरी दरवाजे पर पुलिस के दुर्व्यवहार के विरोध में एक विशाल सभा हुई जिसमें लालाजी ने कहा, "जो सरकार निहत्थी जनता पर इस प्रकार के जालिमाना हमले करती है, उसे तहजीबयाफ्ता सरकार नहीं कहा जा सकता और ऐसी सरकार कायम नहीं रह सकती। मैं आज चैलेन्ज देता हूं कि इस सरकार की पुलिस ने मुझ पर जो वार किया है, वह एक दिन इस सरकार को ले डूबेगा।...मैं घोषण करता हूं कि मुझ पर जो लाठियां पड़ी हैं, वह भारत में अंग्रेजी राज्य की अर्थी की अन्तिम कीलें सिद्ध होंगी।"

लालाजी को घायल अवस्था में अस्पताल ले जाया गया। 18 दिन बाद 17 नवम्बर 1928 को प्रातः 7 बजे लाठियों की चोटों के कारण लालाजी चिरनिंद्रा में सो गए। लालाजी के इस बलिदान की एक परिणति 17 दिसम्बर को साण्डर्स वध के रूप में सामने आई। भगतसिंह तथा उनके साथियों ने लालजी के इस बलिदान के प्रतिशोध स्वरूप साण्डर्स की हत्या की, जिसकी अन्तिम परिणति भगतसिंह, राजगुरु तथा सुखदेव का बलिदान थी। लाला लाजपतराय आज हमारे बीच नहीं हैं लेकिन उनका संदेश आज भी मौजूद है। □

राजस्थान में विकासोन्मुख मत्स्य पालन उद्योग

रणछोड़ त्रिपाठी

'राजस्थान' जिसकी सीमाएं समुद्र की बजाय रेगिस्तान से मिलती हैं। जहां अकाल व पानी की कमी हमेशा रहती हो वहां मछली पालन को बढ़ावा देना असंभव को संभव करने वाली बात है, किन्तु इन विपरीत भौगोलिक परिस्थितियों के बावजूद यहां मछली पालन के क्षेत्र में जो प्रगति हुई एवं इसे एक उद्योग के रूप में विकसित किया गया वह उल्लेखनीय है।

राजस्थान में मत्स्य विकास कार्यक्रम के तहत 1953 में पशुपालन विभाग की एक इकाई के रूप में इस कार्य को हाथ में लिया गया एवं 1953 में ही फिशरीज एक्ट बनाया गया। राजस्थान के 27 जिलों में से आज 21 जिलों में मत्स्य विकास व पालन योजनाएं कार्यरत हैं जबकि 6 अन्य जिले रेगिस्तानी होने से इनमें मत्स्य पालन की संभावनाएं क्षीण थी परन्तु इंदिरा गांधी नहर के विकास के साथ-साथ अब इन जिलों में भी मत्स्य पालन कार्यक्रम अपनाया जाने लगा है।

राजस्थान में 32 वृहत व मध्यम बहुउद्देशीय सिंचाई परियोजनाएं हैं जिनका क्षेत्रफल लगभग 1.2 लाख हेक्टेयर है। इनके अतिरिक्त कई लघु सिंचाई परियोजनाएं एवं बांध तथा तालाब हैं जिनका क्षेत्रफल 1.8 लाख हेक्टेयर है। इस प्रकार कुल 3 लाख हेक्टेयर क्षेत्र मत्स्य पालन के लिए उपलब्ध है। यहां जलाशयों के अलावा चम्बल, माही, खारी, बेडच, बनास, लूनी, सोम व जाखम जैसी बड़ी नदियां हैं। इसके अतिरिक्त इन्दिरा गांधी नहर के 17 धगधर पिट्स हैं। जिनमें प्रत्येक का क्षेत्रफल 5-6 हजार हेक्टेयर है। इस नहर से मछली पालन में प्रतिवर्ष 25.30 लाख रुपये की आय होती है। इसके पानी में तेजी से बढ़ने वाली कार्प मछलियां तथा आर्थिक महत्व की मुख्य मछलियां, कतला, रोहू, मिगल, कामनकार्प आदि 70 से 80 प्रतिशत तक होती हैं।

मत्स्य पालन व उत्पादन में मत्स्य बीज ही सबसे महत्त्वपूर्ण एवं प्रथम आधार है। राज्य में मत्स्य बीज उत्पादन पर काफी ध्यान दिया गया है। वर्तमान में यहां 80 प्रतिशत बीज शुष्क बंध विधि से एवं 20 प्रतिशत बीज प्रेरित प्रजनन से फार्मों पर पाला जाता है।

प्राकृतिक स्रोतों से भी मत्स्य बीज एकत्रित किया जाता है लेकिन गत वर्षों में हुई कमी से इनमें भी कमी आई है। राज्य में 10 शुष्क बंध प्रजनन इकाईयां, 5 मत्स्य बीज उत्पादन परियोजनाएं तथा 6 जलाशय प्रबंध परियोजनाएं हैं। राज्य में 28 फिस फार्म हैं। राज्य में जलवायु अर्द्ध शुष्क होने से यहां प्रेरित प्रजनन के प्रयास कम सफल होते हैं। फिर भी इसके लिए एयर कण्डीशन इण्डोर हैचरी लगाकर अधिक-से-अधिक मत्स्य बीज उत्पादन के प्रयास किए जा रहे हैं। दो राष्ट्रीय मत्स्य बीज फार्मों की केन्द्र सरकार की मदद से कोटा एवं बांसवाड़ा में स्थापना की जा रही है ताकि आने वाले वर्षों में मत्स्य बीज की मांग की पूर्ति की जा सके। मत्स्य बीज अन्य राज्यों से भी मंगाया जाने लगा है। इस वर्ष के अन्त तक 50 मिलियन मत्स्य बीज के उत्पादन के लक्ष्य को प्राप्त करने के प्रयास किए जा रहे हैं।

राजस्थान में मत्स्य पालन के स्रोतों की कमी भले ही नहीं हो लेकिन यहां देश के समुद्र तटीय राज्यों की भांति मछुआ समुदाय के लोग नहीं हैं। यदि राज्य में इस समुदाय के लोग उल्लेखनीय संख्या में होते तो राज्य में मत्स्य पालन का विकास और अधिक तेज गति से होता। मछुआरों की कमी के कारण यहां मत्स्य पालन के लिए ठेकेदारी पर निर्भर रहना पड़ता है। यहां अधिकांश मत्स्य आखेट कार्य ठेकेदारों के पास हैं। हालांकि मत्स्य विकास में ठेकेदारी प्रथा राज्य व मत्स्य पालन दोनों के लिए उपयुक्त नहीं है किन्तु मछुआरों की कमी के कारण ठेकेदारों पर निर्भर होना पड़ता है। ये ठेकेदार दूसरे राज्यों से मछुआरों को श्रमिक के रूप में लाते हैं। इससे स्थानीय श्रमिकों को रोजगार नहीं मिल पाता है। राज्य में 70 के लगभग मत्स्य सहकारी समितियां भी कार्यरत हैं किन्तु वह भी ठेकेदारों के प्रभाव से मुक्त नहीं हैं।

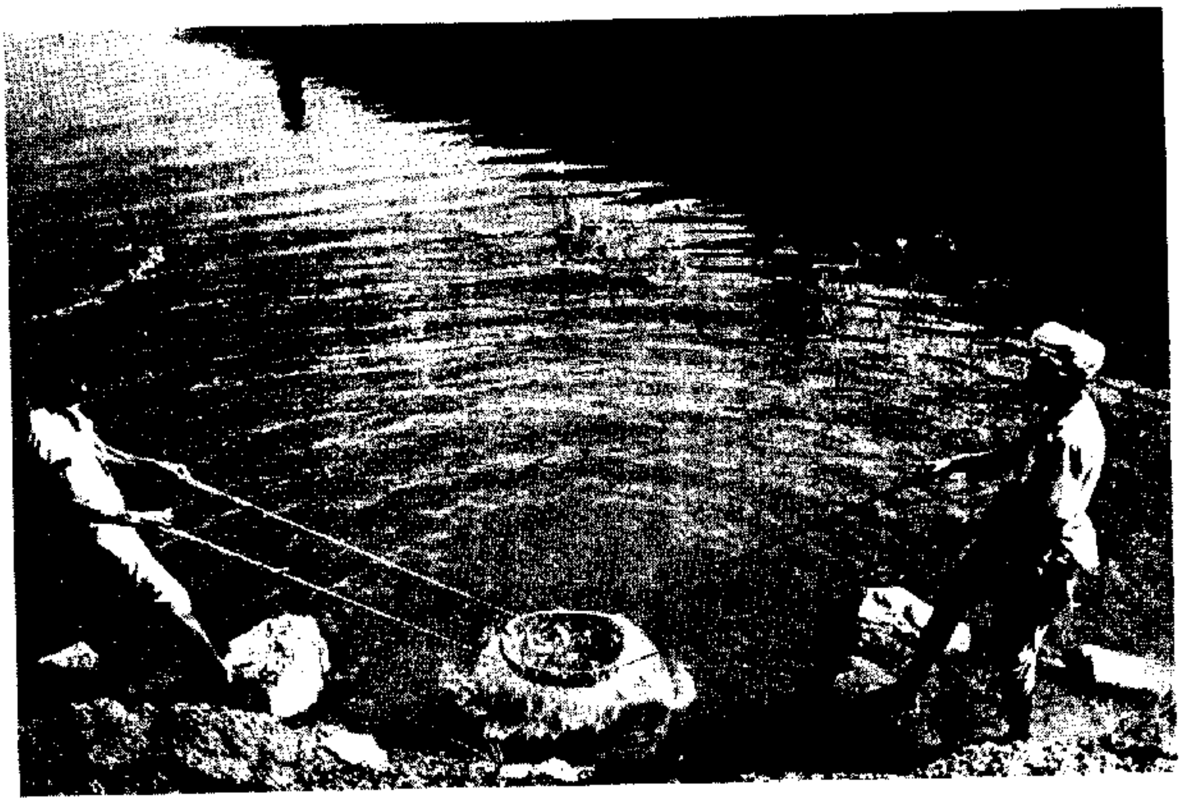

बड़े बांध में डालने के लिए छोटी मछलियां निकालते हुए

सहकारी संस्था के बोली लगाने पर 12.5 प्रतिशत की छूट होने से ठेकेदारों ने इन संस्थाओं को अपने चंगुल में ले रखा है। इस प्रकार के ठेकेदारी शोषण से लोगों को मुक्त कराने के लिए जयसमंद, माहीबजाज, सागर, कडाना डेम के लगभग 30 हजार हेक्टेयर क्षेत्र को राजस्थान जनजाति विकास संघ को वार्षिक निश्चित आय पर इस क्षेत्र के आदिवासियों को मत्स्य पालन बनाकर विकसित करने को दिया गया है। यहां 22 समितियां हैं जिनमें 2100 से अधिक सदस्य हैं, ये सभी समितियां आदिवासियों की हैं। इनके सदस्यों को पूरा रोजगार मत्स्य आखेट से मिल रहा है। इससे इनकी वार्षिक आय में वृद्धि हुई एवं इन्हें अपना जीवन-स्तर सुधारने में सहयोग मिला है। साथ ही अन्य आदिवासियों का भी मत्स्य पालन में रुझान बढ़ा है। संघ द्वारा मत्स्य पालकों को प्रशिक्षण देने के अतिरिक्त ऋण द्वारा जाल व नाव उपलब्ध कराने की भी व्यवस्था है।

राज्य में मत्स्य पालकों के विकास के लिए 6 केन्द्र प्रायोजित तथा 16 राज्य संचालित मत्स्य पालक विकास अभिकरण हैं। यह अभिकरण मध्यम व लघु श्रेणी के जलाशयों का विकास, पिछड़े व निर्धन समुदाय के व्यक्तियों का चयन प्रशिक्षण, ऋण, बीज व विपणन व्यवस्था कर मत्स्य विकास में लगे हुए हैं। राज्य में मत्स्य अनुसंधान एवं सर्वेक्षण करने के लिए उदयपुर व टोंक में यूनिट स्थापित की गई हैं। मत्स्य पालक प्रशिक्षण हेतु उदयपुर व सवाईमाधोपुर में प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित हैं।

राज्य में उपलब्ध जल क्षेत्र, मत्स्य विकास के लिए चल रही विभिन्न योजनाओं तथा मत्स्य पालन के क्षेत्र में लोगों की बढ़ती हुई रुचि के आधार पर इस बात की भी पूरी संभावना है कि आने वाले वर्षों में मत्स्य विकास कार्यक्रम से जहां और अधिक रोजगार मिल सकेगा, वहीं राज्य की आय में आशातीत वृद्धि होगी। राज्य को वर्तमान में मत्स्य पालन से लगभग डेढ़ करोड़ रुपये वार्षिक आय होती है। राज्य में चालू वर्ष में 16 हजार मैट्रिक टन मछली उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है। इन सभी बातों से स्पष्ट प्रतीत है कि आने वाले समय में इस कार्यक्रम का उज्ज्वल भविष्य है।

सहायक सूचना एवं जन सम्पर्क अधिकारी
सूचना केन्द्र, बूबूवाला भवन,
भीलवाड़ा-311001 (राजस्थान)

ग्रामीण विकास का सैद्धान्तिक पक्ष

डा. बी. एम. चितलंगी

तीसरी दुनिया के अनेक नव स्वतंत्रता प्राप्त देश अपने आर्थिक विकास के लिए निरन्तर प्रयत्नशील हैं। इन देशों द्वारा यह महसूस किया जा रहा है कि पिछली दो शताब्दियों में विकास के लिए अपनायी गई व्यूह रचना उनकी वास्तविक आवश्यकताओं के अनुरूप नहीं है। विकास के लिए केवल आर्थिक विकास को ही आधार मानना पर्याप्त नहीं है। अनेक राजनीतिज्ञों, अर्थशास्त्रियों एवं समाजशास्त्रियों द्वारा विकास की वैकल्पिक व्यूह रचना का अनुसंधान करने का प्रयत्न किया गया है। इन अनुसंधानों में पश्चिमी माडल जिसमें उपभोक्ता समुदायों का निर्माण करना है, इन देशों के लिए न तो पर्याप्त है और न ही व्यावहारिक। अब विकासशील देशों के विकास प्रयत्नों का मुख्य केन्द्र सम्पूर्ण जनसंख्या की मूल आवश्यकताओं की पूर्ति करना है। इन मूल आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ अनेक राजनैतिक, सामाजिक एवं नैतिक समस्याएं जुड़ी हुई हैं। विकास का आर्थिक क्षेत्र अन्य पूरक क्षेत्रों जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, सांस्कृतिक विकास, राजनीतिक भागीदारी, व्यक्ति की गरिमा एवं स्वतंत्रता इत्यादि से भी जुड़ा हुआ है। इन सब मूल एवं पूरक आवश्यकताओं को एक साथ कैसे पूरा किया जाए? यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है।

विकास माडल

विकास से सम्बन्धित तीन माडल हमारे सामने हैं। प्रथम जिसे पश्चिमी माडल या मुक्त व्यापार माडल कहा जा सकता है। इसमें साधनों के व्यक्तिगत स्वामित्व, अधिक उत्पादन, अधिक पूंजी निवेश, अधिक निर्यात तथा मूल्य स्थिरता रहती है। इसमें अधिकाधिक रूप में व्यक्तिगत विकास के प्रेरक तत्व विद्यमान रहते हैं। यद्यपि विकास का यह माडल आर्थिक विकास के लिए संतोषप्रद रहा है परन्तु गरीबी उन्मूलन, आय का असमान वितरण, बेरोजगारी इत्यादि को समाप्त नहीं कर सका है। विश्व बैंक एवं विकास संस्थान के द्वारा किए गए एक अध्ययन के अनुसार—"अब यह स्पष्ट हो गया है कि एक दशाब्दी से ज्यादा अविकसित देशों में तेज गति से विकास प्रयत्नों के बावजूद उनकी जनसंख्या के तीसरे हिस्से को भी लाभान्वित नहीं किया जा सका। यद्यपि 1960 के पश्चात तीसरी दुनिया के प्रति व्यक्ति आय में पचास प्रतिशत की वृद्धि हुई है परन्तु विकास का लाभ देशों के आन्तरिक क्षेत्रों तथा सामाजिक एवं आर्थिक समूहों में असमान रूप से वितरित रहा है। यह बहुत बड़ा विरोधाभास है कि विकास के प्रथम दशाब्दी में विकास सम्बन्धी नीतियां उम्मीदों से अधिक सफल रही हैं, परन्तु सामाजिक उद्देश्यों का समन्वित विकास का विचार एक प्रश्न चिह्न बना हुआ है।

विकास का दूसरा प्रतिमान समाजवादी माडल का है जिसमें अवसर की समानता तथा उत्पादन के साधनों पर सामूहिक अथवा राज्य नियन्त्रण रहता है। विकास के समाजवादी माडल अपनाने वाले देशों ने आर्थिक विकास के साथ-साथ समान वितरण तथा मूल आवश्यकताओं की पूर्ति सन्तोषप्रद तरीके से की है, परन्तु व्यक्तिगत स्वतंत्रता, व्यवसाय, आवास एवं राजनैतिक स्वतंत्रताएं प्रतिबन्धित रहती हैं।

तीसरा प्रतिमान एक मिश्रित माडल के रूप में है, जहां व्यक्तिगत स्वामित्व के साथ पुनः वितरण, सामाजिक न्याय एवं कुछ क्षेत्रों पर राजकीय नियन्त्रण की व्यवस्था रहती है। व्यवहार में इन माडलों का एक मिश्रित परिणाम पिछले वर्षों में सामने आया है, जिसमें कुछ अधिक सफल रहे हैं परन्तु ऐसा कोई माडल सामने नहीं आया है जिस पर बौद्धिक मतैक्य हो।

भारतीय अर्थव्यवस्था का स्वरूप अन्य देशों की तुलना में भिन्न है। यहां गरीबी का स्वरूप एवं क्षेत्र भिन्न प्रकार का है। पिछले तीन दशकों में विकास के लिए अनेक प्रयत्न किए गए हैं परन्तु इनके कारण नीतियों में संघर्ष एवं विकास कार्यों की क्रियान्विती में कुछ उदासीनता रही है। भारत में विकास का एक प्रमुख क्षेत्र ग्रामीण विकास है। आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास की दृष्टि से ग्राम एक महत्वपूर्ण इकाई है। अतः ग्रामीण विकास का सैद्धान्तिक विश्लेषण आवश्यक है। ग्रामीण विकास के विश्लेषण का महत्व अभिव्यक्त करते हुए इस क्षेत्र के विशेषज्ञ एस. के. शर्मा लिखते हैं कि ग्रामीण विकास के लक्ष्य इतने व्यापक एवं असीमित हैं कि उनका मात्रात्मक एवं गुणात्मक विश्लेषण सरलता से संभव नहीं है। ग्रामीण विकास के लक्ष्यों को निश्चित एवं स्पष्ट परिभाषा के अभाव में इसकी समीक्षा का कार्य अत्यन्त ही कठिन है।

ग्रामीण विकास दर्शन

ग्रामीण विकास की मान्यता का वैज्ञानिक विश्लेषण स्वतंत्रता के पश्चात इस दिशा में किए गए प्रयत्नों के साथ

प्रारम्भ होता है। स्वतंत्रता से पूर्व ब्रिटिश शासन काल में इस दिशा में कोई प्रयत्न ही नहीं किया गया। राष्ट्रीय आन्दोलन के समय ग्रामीण समस्याओं तथा पुनः निर्माण के बारे में समय–समय पर विचार व्यक्त किए गए। कुछ ऐसे प्रयास भी किए गए जिनका उद्देश्य ग्रामीण जनता की समाज सेवा करना था। ग्रामीण विकास के क्षेत्र में ये परीक्षण श्री निकेतन संस्था, मार्तदण्डय परीक्षण, गुड़गांव परीक्षण, बड़ोदा योजना एवं सेवा ग्राम संस्था थे। ग्रामीण विकास के इन परीक्षणों में 'समाज सेवा' की भावना प्रमुख थी। इस प्रकार ग्रामीण विकास की मान्यता लम्बे समय से प्रचलित थी। टी. एन. चतुर्वेदी के शब्दों में ग्रामीण विकास एवं सैद्धान्तिक मान्यता, एक आदर्श एवं एक राजनैतिक नारे के रूप में हमारे साथ उस समय से जुड़ा हुआ है, जब आर्थिक विकास के सिद्धान्त, विकास माडल या योजना प्रणाली अस्तित्व में ही नहीं आई थी।

ग्रामीण विकास पर अनेक अध्ययन हुए हैं। विश्व बैंक विभाग ने ग्रामीण विकास की मान्यता बतलाते हुए लिखा है कि राष्ट्रीय स्तर पर ग्रामीण विकास में ग्रामीण कृषि विकास, नये रोजगार कार्यक्रम, स्वास्थ्य एवं शिक्षा सुधार, संचार व्यवस्था एवं आवास सुविधा सम्बन्धी कार्यक्रमों को सम्मिलित किया जाना चाहिए। ये समस्त कार्य एक व्यवस्थित सूची या संख्याक्रम में होने चाहिए तथा विकास के इन समस्त लक्ष्यों को पूरा करने के लिए समस्याओं का निराकरण एवं विकास के लिए सुझावों के पथ को प्रस्तुत करना है।

पिछले कुछ वर्षों से ग्रामीण विकास के लक्ष्यों की प्राथमिकताओं में परिवर्तन हुआ है। कृषि विकास के अन्तर्गत हरित क्रान्ति सामाजिक समस्याओं का निराकरण नहीं कर पायी। सामाजिक न्याय के अभाव में आर्थिक सम्बन्धों में नकारात्मक रूप से छोटी-सी ही सफलता प्राप्त हो सकी। ग्रामीण जनता जो निर्धनता की सीमा रेखा से नीचे है, विकास की अपेक्षा उनकी समस्याएं निरन्तर बढ़ती गई है।

ग्रामीण विकास को परिभाषित करते हुए कहा गया है कि ग्रामीण जनता का जीवन स्तर ऊंचा उठाना एवं वातावरण के सुधार ही ग्रामीण विकास है जिसमें अनेक लाभों को विकास कार्यों में विभक्त किया जाता है।

ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में न्यूनतम आवश्यकता आपूर्ति, अधिक उत्पादन, आर्थिक उन्नति सम्मिलित हैं। विश्व बैंक ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में उत्पादन सुधार, रोजगार को बढ़ावा, निम्न स्तर के लोगों की आय में वृद्धि, भोजन, आवास, शिक्षा और स्वास्थ्य आवश्यकताओं को पूरा करता है।

ग्रामीण विकास की प्रक्रिया में आर्थिक विकास पर अधिक बल दिया जाता है। उससे सीमित रूप से उत्पादन अवश्य बढ़ा है, परन्तु अनेक सामाजिक समस्याएं उभरकर सामने आई हैं। अतः ग्रामीण विकास में ग्रामीण जनता के सामाजिक जीवन स्तर में सुधार व आर्थिक उत्थान सम्मिलित है। एक अध्ययन द्वारा ग्रामीण विकास के क्षेत्र में उन ग्रामीणों को सम्मिलित किया गया जिनका जीवन स्तर निर्धनता की सीमा रेखा के नीचे है, जैसे लघु कृषक, खेतीहर मजदूर, भूमिहीन किसान इत्यादि।

भारत सरकार के अनुसार ग्रामीण विकास एक ऐसा व्यापक कार्यक्रम है, जिसमें ग्रामीण जनता के लिए कृषि विकास, आर्थिक तथा सामाजिक उन्नति के आधार की तैयारी, भूमिहीनों के लिए उचित मजदूरी, मकान बनाने के लिए भूमि श्रम-नियोजन, जनस्वास्थ्य, शिक्षा, साक्षरता तथा संचार आदि कार्यक्रम सम्मिलित हैं।

ग्रामीण विकास का मूल आर्थिक विकास माना जाता रहा है। कृषि विकास ग्रामीण विकास का हृदय है, परन्तु समग्र ग्रामीण विकास नहीं। गांधीजी ने अपने आदर्श गांव की कल्पना के बारे में इंडियन पत्रिका में लिखा था कि "ग्रामीण विकास में औद्योगिकीकरण की अपेक्षा ग्रामीण जनता की मूल आवश्यकताएं, भोजन, वस्त्र व आवास की सुविधा पर अधिक महत्व दिया जाता है।" इसके लिए यह जरूरी बताया गया कि ग्रामीण जनता के लिए रोजगार के साधन सुलभ करवाये जाएं तथा जीवन स्तर ऊंचा उठाया जा सके। रोजगार के साधन कुटीर और लघु उद्योगों के विकास द्वारा बढ़ाए जा सकते हैं। अतः गांधीजी के दर्शन में ग्रामीण विकास को ग्रामीण साधनों के विस्तार एवं प्रोत्साहन पर जोर दिया गया है। ग्रामीण विकास का अभिप्राय ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले अनेकानेक न्यून आय वर्ग के लोगों के जीवन स्तर में सुधार लाना और उनके विकास के क्रम को आत्मपोषित बनाना है। एस. एम. शाह ने ग्रामीण विकास पर अपने अध्ययन में लिखा है कि "शहरी क्षेत्रों से बाहर रहने वाली जनता अर्थात् ग्रामीणों के जीवन स्तर में अच्छी तरह से सुधार लाना और उनके सामाजिक ढांचे का विकास करना ही, पूर्णरूपेण ग्रामीण विकास प्रक्रिया है।"

इस प्रकार भारतीय ग्रामीण विकास दर्शन में आर्थिक उन्नति के साथ-साथ सामाजिक न्याय पर भी विशेष जोर दिया गया है। यह मानना होगा कि ग्रामीण जनता की निर्धनता पर सीधा प्रहार तब तक जारी नहीं रखा जा सकता और न ही कोई वांछित लाभ मिल सकते हैं अगर अर्थव्यवस्था के समग्र विकास की गति धीमी हो तथा विकास के लाभ असमान रूप से वितरित हों। अर्थव्यवस्था की गति में तेजी एवं उत्पादन में वृद्धि के बिना ग्रामीण कार्यक्रमों के चलाने के लिए अवश्यक साधन एवं समताएं उत्पन्न नहीं की जा सकतीं।

ग्रामीण विकास का दूसरा महत्वपूर्ण पहलू सामाजिक परिवर्तन है, जिसमें संरचनात्मक परिवर्तन, शैक्षिक विकास, जागरूकता में वृद्धि तथा दृष्टिकोण, अनुप्रेरणा और व्यवहार में परिवर्तन शामिल है जिसके बिना ग्रामीण जनता की आर्थिक बेहतरी संभव नहीं है। ग्रामीण सामाजिक ढांचा ऐसा होना चाहिए जिसमें गरीब वर्ग अपनी पहल प्रदर्शित कर सकें और उन्नति के लिए मजबूत आधार तैयार कर सके। साथ ही ऐसे ढांचे में यह सुनिश्चित किया जा सके कि ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का वास्तविक लाभ ग्रामीण जनता को ही मिल सके और अनेक प्रकार की कमियों से समय व्यर्थ में नहीं व्यतीत किया जाए।

भारतीय संविधान में ग्रामीण विकास की मान्यता

महात्मा गांधी के प्रभाव एवं राष्ट्रीय आन्दोलन के समय ग्रामीण क्षेत्रों की चिन्तनीय स्थिति के संदर्भ में भारतीय संविधान निर्माताओं ने पर्याप्त विचार-विमर्श के बाद राज्य नीति निर्देशक तत्वों के अध्याय के अन्तर्गत ग्रामीण जीवन के कुछ पहलुओं को संविधान में सम्मिलित किया गया है। संविधान के अनुच्छेद 40 में कहा गया है कि "राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिए अग्रसर होगा तथा उनको ऐसी शक्तियां प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने के योग्य बनाने के लिए आवश्यक हो।" संविधान के इस अनुच्छेद का मुख्य आधार यह है कि अगर भारत का विकास करना है तो यह ग्रामीण जीवन के पुनर्निर्माण से ही संभव है। इसके द्वारा देश के निर्माण में गांवों की सक्रिय भागीदारी को प्रोत्साहित करना है। संविधान में न केवल ग्राम पंचायतों के बारे में ही व्यवस्था रखी गई है अपितु ग्रामीण जीवन के अन्य पहलुओं को भी स्वीकार किया गया है। अनुच्छेद 43 में यह व्यवस्था है कि विशेष रूप से ग्रामों में कुटीर उद्योगों को वैयक्तिक अथवा सहकारी आधार पर बढ़ाने का प्रयास करेगा। संविधान निर्माता गरीब ग्रामीणों एवं अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के उत्थान के प्रति भी सजग थे। अतः अनुच्छेद 46 में यह कहा गया है कि राज्य जनता के दुर्बलतर भाग के विशेषतया अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के शिक्षा एवं कार्य सम्बन्धी हितों की विशेष सावधानी से उन्नति करेगा, तथा सामाजिक अन्याय, सब प्रकार के शोषण से उनका संरक्षण करेगा।

ग्रामीण जीवन से जुड़ी हुई अर्थव्यवस्था में कृषि एवं पशुपालन का विशेष स्थान है। ग्रामीण विकास का आर्थिक पहलू इससे पूर्ण तथा सम्बन्धित है। अतः संविधान के अनुच्छेद 48 में यह व्यवस्था रखी गई है कि "राज्य कृषि एवं पशुपालन को आधुनिक तथा वैज्ञानिक प्रणालियों से संगठित करने का प्रयास करेगा तथा विशेषतया गायों एवं बछड़ों तथा अन्य दुधारू एवं वाहक पशुओं की नस्ल के परीक्षण एवं उनका सुधार करने के लिए तथा उनके वंश को प्रतिषेध करने के लिए अग्रसर होगा।"

अतः भारतीय संविधान में ग्रामीण विकास से सम्बन्धित आर्थिक विकास एवं सामाजिक न्याय के दर्शन को सम्मिलित किया गया है। अन्त में ग्रामीण विकास की परिभाषा ग्रामीणों का सामाजिक न्याय के साथ आर्थिक विकास के माध्यम से सर्वांगीण विकास करना है।

राजनीति विज्ञान विभाग,
जोधपुर विश्वविद्यालय, जोधपुर

भारत में महिलाओं की स्थिति : एक अध्ययन

हीरा बल्लभ पन्त

पुत्रवती भव! जैसे आशीर्वादों वाली मानसिकता वाले हमारे देश में जब पुत्र की महिमा प्राचीन काल से ही लोगों के दिमागों में ठूंसी जाती रही हो तो एक स्त्री भला एक स्त्री को जन्म देकर कैसे खुश रह सकती है और अगर कहीं स्त्री अपने प्रकृतिजन्य, निष्पक्ष मातृत्व के तहत शिशु कन्या को हृदय से स्वीकार करती है तो ज्यादातर आर्थिक नियंत्रण उसके हाथ में न होने तथा सामाजिक ढांचा व सोच उस कन्या के लिए इतना विषम तथा विपरीत माहौल तैयार करते हैं कि जन्म के बाद प्रकृति-प्रदत्त दीर्घायु विशेषताओं के बावजूद उसके जिंदा रहने की संभावनायें शिशु पुत्र के मुकाबले काफी कम हो जाती हैं। शिशु कन्या के पैदा होते ही खाने-पीने, दवा-दारू के प्रति लापरवाही बरतना, शिक्षा के प्रति उदासीनता, व्यक्तित्व के स्वस्थ विकास के लिए उचित व खुले माहौल से वंचित करना, उपेक्षा-प्रताड़ना-उत्पीड़न-शोषण आदि द्वारा उसके अपने एक व्यक्ति होने के अहसास को खत्म कर मानसिक रूप से दूसरे दर्जे के इंसान में ढालने का सामाजिक कुचक्र-व्यवस्था, कुछ ऐसी सामाजिक बुराइयां व षड्यंत्र प्राचीन काल से चले आ रहे हैं, जिनके चलते एक बालिका का जीवन हमेशा से ही एक स्वस्थ-समान सामाजिक जीवन के मापदण्डों के नजदीक फटकने तक से वंचित रहा है। चिकित्सा विज्ञान में तीव्र गति से हुई कुछ उपलब्धियों ने जहां विकासशील देशों, खासकर भारत के शिशु पुत्र का जीवन बेहतर व सुरक्षित बनाने में मदद की है, वहीं यह उपलब्धियां पुरानी मानसिकता में जकड़कर अल्ट्रासाउन्ड व सोनोग्राफी की मदद से शिशु कन्या की हत्या का सामान जुटाने में लगी है।

पारम्परिक छवि

प्राचीन भारतीय समाज में महिला की प्रतिष्ठा यूनान व रोम सभ्यता की तुलना में अधिक थी। लेकिन वैदिक युग में महिलाओं की स्थिति गिरने लगी और इस्लामिक काल में यह बिल्कुल नीचे चली गई; अर्थव्यवस्था में स्त्री की प्रतिष्ठा लम्बे समय तक गतिहीन रही, बचपन से वृद्धावस्था तक कभी भी उसका अपना स्वतंत्र अस्तित्व नहीं था, वह सदैव पिता, पति व पुत्र के अधीन आश्रित रखी गई।

औरत-औरत है, उसके द्वारा प्रतिस्पर्धा में मनुष्य को पीछे धकेलने की बात बेमानी है, उसका व्यक्तित्व, क्षमता, स्वभावगत विशेषताएं अलग हैं। उनके अनुरूप उसे धर्म, जाति, लिंग के भेदभाव के बिना कार्य करने के समान अवसर दिए जाने चाहिए। आज वैज्ञानिक दृष्टिकोण के मध्य सामंजस्य की समस्या है, वैज्ञानिक, भौतिक प्रगति और समृद्धि का आतंक, मनुष्य की मानसिकता के 'आध्यात्मिक आयाम' और उसकी 'नैतिक गंभीरता' को कचोट रहा है। इस चुनौती के बीच भी नारी विकास के लिए अनेक क्रांतिकारी कदम उठाए गए हैं।

महिलाओं की स्थिति : कुछ तथ्य

भारत में जहां प्राचीन धर्म ग्रन्थों में महिलाओं की पूजा की जाती थी, वर्तमान समय में वास्तविकता ठीक इसके विपरीत है, अन्य समाजों में जहां शिशु-पुत्र की मृत्युदर अधिक पायी जाती है वहीं भारत में 35 साल की उम्र तक पुरुषों के मुकाबले स्त्रियों की मृत्युदर ज्यादा है—सिर्फ जन्म के प्रथम सप्ताह अथवा महीना छोड़कर। एक सर्वेक्षण के अनुसार भारत में 5 साल की उम्र तक लड़कों की मृत्युदर 120 के मुकाबले लड़कियों की मृत्युदर 130 है। 1970 के दशक में उत्तर प्रदेश के ग्रामीण इलाकों में बालिकाओं की मृत्युदर प्रति हजार 223 थी, तो बालकों की 170, यह तथ्य भी सामने आया है कि 1960 के दशक तक इस राज्य के ग्रामीण इलाकों में बालिकाओं की तुलना में बालकों की मृत्युदर ज्यादा थी, लेकिन बाद में आए सामाजिक-आर्थिक तथा सांस्कृतिक परिवर्तन बालिकाओं के लिए विपरीत साबित हुए। चिकित्सा सुविधाओं में हुए विस्तार का ज्यादातर लाभ बालकों तक पहुंचाने से भी उनकी मृत्युदर में कमी आयी और वर्तमान समय में उत्तर प्रदेश में विभिन्न आयु वर्गों में बालकों की तुलना में बालिकाओं की मृत्युदर के आंकड़े चौंका देने वाले हैं। (देखें सारणी संख्या-1)

सारणी-1 (प्रतिशत में)

आयु वर्ग		ग्रामीण क्षेत्र	नगरीय क्षेत्र
0-4	बालक	68.9	41.3
	बालिका	103.7	52.6
5-9	बालक	5.6	3.8
	बालिका	8.8	5.7
10-14	बालक	3.7	1.7
	बालिका	4.6	3.7

स्रोत : द गर्ल चाइल्ड आफ उत्तर प्रदेश, लखनऊ, 1981

राजस्थान में स्थित जैसलमेर जिले के अंदरूनी व दूर-दराज के इलाकों में बसे भाटी राजपूतों के घरों में कन्या होने पर अक्सर उन्हें मार दिया जाता है। यह नतीजा निकला कि जहां भारत का औसत लिंग अनुपात 1000 पुरुषों के पीछे 935 स्त्रियां हैं, वहीं इस इलाके में 750, राजस्थान में यह अनुपात 1000:919 है, जबकि जैसलमेर जिले में 1000:881, जहां भाटी राजपूतों की संख्या ज्यादा है। जहां तक सिर्फ भाटी राजपूतों का सवाल है, उनमें स्त्रियों व पुरुषों का अनुपात संभवतः संसार में निम्नतम है—सिर्फ 550 स्त्रियां प्रति हजार पुरुषों के मुकाबले। जैसलमेर की पश्चिमी सीमा क्षेत्र में एक दर्जन से ज्यादा भाटी राजपूतों के गांव की 10,000 आबादी में मात्र 50 भाटी लड़कियां हैं। भारत में 1901 से 1971 तक की जनगणना देखें तो प्रत्येक दशक में महिलाओं की संख्या पुरुषों के मुकाबले कम थी, 1971-1981 के दशक में महिलाओं की संख्या में कुछ वृद्धि हुई है। (देखें सारणी संख्या-2)

सारणी-2

लिंग अनुपात : भारत (1981)

जनगणना वर्ष	प्रति हजार पुरुषों के पीछे स्त्रियों की संख्या
1901	972
1911	964
1921	955
1931	950
1941	946
1951	945
1961	941
1971	930
1981	935

भारत में स्त्रियों का औसत जीवन काल पुरुषों के मुकाबले काफी कम है। जहां भारत में एक पुरुष 52.6 साल जिंदा रहने की संभावना लेकर जन्म लेता है, वहीं महिलाओं के लिए यह संभावना 51.6 साल ही है। यह जानना भी रोचक होगा कि 1911-1921 के दशक में महिलाओं का औसत जीवन काल पुरुषों के मुकाबले ज्यादा था, लेकिन इसके बाद पुरुषों का जीवन काल बढ़ता गया और महिलाओं से अधिक हो गया। इसके भेदभाव के लिए जहां कई और कारण जिम्मेदार हैं, वहीं एक मुख्य कारण कुपोषण भी है।

'केयर' संस्था द्वारा पंजाब में किए गए एक सर्वेक्षण के दौरान 18.5 प्रतिशत नवजात शिशु-कन्याओं में भयंकर कुपोषण पाया गया, जबकि शिशु-पुत्रों में मात्र 2.35 प्रतिशत। 0-5 वर्ष की आयु में बच्चों की पोषण स्थिति का आंकड़ा यह बताता है, कि जहां 71.43 प्रतिशत लड़कियां भयंकर कुपोषण का शिकार हैं, वहीं लड़के मात्र 28.57 प्रतिशत (साप्ताहिक हिन्दुस्तान, नवम्बर 1988) साधारण कुपोषण के शिकार बच्चों में यह प्रतिशत क्रमशः 56.93 तथा 43.97 प्रतिशत है।

1901 में भारत में सिर्फ 5.35 प्रतिशत आबादी साक्षर थी, कुल आबादी में पुरुषों की साक्षरता 9.83 प्रतिशत थी, जबकि महिलाओं की मात्र 0.69 प्रतिशत। आज 90 साल के बाद भी इस दयनीय स्थिति में कोई पर्याप्त सुधार नहीं आया है।1981 में कुल साक्षरता 24.88 प्रतिशत के मुकाबले पुरुषों की साक्षरता 46.74 प्रतिशत है। (सारणी संख्या- 3) साक्षरता का यह प्रतिशत शहरों में लड़कियों को पढ़ने, लिखने तथा आत्मनिर्भर बनाने के सामाजिक-आर्थिक दबावों के कारण बढ़ा है।

सारणी-3

साक्षरता 1901-1981
(कुल आबादी में साक्षरों का प्रतिशत)

जनगणना वर्ष	व्यक्ति	पुरुष	स्त्री
1901	5.35	9.83	0.69
1921	7.16	12.21	1.81
1941	16.10	24.90	7.30
1961	24.02	34.44	12.95
1971	29.45	39.45	18.70
1981	36.23	46.74	24.88

ग्रामीण इलाकों में आज भी बालक-बालिकाओं के मामलों में शिक्षा संबन्धी भेदभाव बहुत अधिक है। 1981 के आकंड़ों के अनुसार ग्रामीण इलाकों में पुरुषों की 46.27 प्रतिशत साक्षरता के मुकाबले महिलाओं की साक्षरता मात्र 17.57 प्रतिशत है। भेदभाव के ये छोटे शहरों की साक्षरता में भी दिखाई देते हैं। जहां पुरुषों की 76.36 प्रतिशत साक्षरता के मुकाबले महिलाओं की साक्षरता मात्र 51.88 प्रतिशत है।

6 से 14 वर्ष के आयु वर्ग में कक्षा 1 से 8 तक भर्ती होने वाले 68.99 प्रतिशत बच्चों में 83.59 प्रतिशत बालक थे, जबकि बालिकाएं सिर्फ 53.55 प्रतिशत।

14-17 आयु वर्ग में कक्षा 9 से 12 के बीच पढ़ रहे 24.85 प्रतिशत बच्चों में 33.74 प्रतिशत बालक थे, जबकि 15.61 प्रतिशत बालिकाएं।

17 से 22 आयु वर्ग में उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे कुल 4.50 प्रतिशत छात्र-छात्राओं में छात्रों के 6.21 प्रतिशत के मुकाबले, छात्राओं की संख्या 2.66 प्रतिशत थी। इन आकड़ों से स्पष्ट पता चलता है कि जैसे-जैसे बच्चे कक्षाओं में जाते हैं बालिकाओं की संख्या घटती जाती है और उच्च शिक्षा में तो यह दूरी बहुत बड़ी हो जाती है। शुरू की छोटी कक्षाओं में बालिकाओं के मुकाबले डेढ़ गुना से थोड़ा अधिक बालक पढ़ते हैं। बीच की कक्षाओं में दो गुने से ज्यादा और उच्च शिक्षा में यह अन्तर तीन गुने के बराबर हो जाता है।

भारतीय संविधान ने स्त्रियों और पुरुषों को समान अधिकार प्रदान किए हैं, संविधान के अनुच्छेद 16 (2) के अन्तर्गत, "लिंग के आधार पर कोई नागरिक किसी नौकरी के लिए अपात्र नहीं समझा जाएगा और न ही उसके साथ इस आधार पर भेदभाव किया जाएगा" किन्तु लेबर ब्यूरो की रिपोर्ट (खदानों में कामगार महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक दशा) के अनुसार खदान कार्यों में लगी महिलाओं में 56 प्रतिशत कामगार महिलाएं अस्थायी तौर पर काम करती हैं और अस्थायी पुरुषों की संख्या केवल 21 प्रतिशत ही है। सर्वेक्षण की गई कोयला के अलावा अनेक खदानों में—' एक भी महिला ऐसी नहीं थी जो स्थायी हो ', ये खदानें ज्यादातर मैंगनीज, पत्थर, चाइनाक्ले, फायरक्ले और जिप्सम आदि की हैं। चाइनाक्ले, फायरक्ले और जिप्सम की खदानों में लगभग 46 प्रतिशत कामगार महिलाएं कैजुअल पायी गईं। कोयला खदानों में कैजुअल महिला कामगारों की संख्या 27 प्रतिशत है।

अखिल भारतीय सेवाओं में केवल 994 महिलाएं विशिष्ट पदों पर नियुक्त हैं, जबकि इन पदों में आसीन पुरुषों की संख्या 15,997 है।

भारतीय पुलिस सेवा में 2,418 पुरुषों के मुकाबले केवल 21 तथा भारतीय प्रशासनिक सेवाओं 4,209 पुरुषों की तुलना में मात्र 339 महिलाएं अधिकारी हैं।

जनजागरण की आवश्यकता

देश के सामाजिक-आर्थिक विकास में महिलाएं महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। कृषि क्षेत्रों में उनका योगदान अन्य क्षेत्रों के विकास की अपेक्षा अधिक है, कुछ परिसीमाओं तथा स्पष्ट कमियों के कारण अधिकांश महिलायें निम्न भुगतान वाली नौकरियों में संलग्न हैं। यदि हम इन महिलाओं की संभाव्यता का पूर्णरूप से उपयोग करना चाहते हैं तो इस स्थिति को बदलना होगा। यदि भारतीय महिला को शिक्षा दी जाए, और उन्नत तकनीक का प्रशिक्षण दिया जाए तो यह अधिक धनात्मक व सक्रिय भूमिका अदा कर सकती है और आर्थिक विकास में अधिक साझेदार बन सकती हैं। महिलाओं को शैक्षिक अवसरों की आवश्यकता है, जो इन्हें आर्थिक व मनोवैज्ञानिक प्रतिफल देंगे। महिला शक्ति को ऊर्जस्वी बनाने के लिए उनकी आर्थिक स्वतंत्रता को बदलना अति आवश्यक है। इस हेतु शिक्षा-स्वरोजगार व कार्य प्रशिक्षण के अतिरिक्त इस वर्ग की सामाजिक प्रतिष्ठा को बदलना होगा। महिलाओं के विकास के लिए विशिष्ट कार्यक्रमों के क्रियान्वयन को मजबूत बनाना चाहिए। इसके लिए बार-बार यह कहा जाता है कि महिलाओं की प्रगतिशील सहभागिता के लिए विभिन्न कार्यक्रमों में यथोचित परिवर्तन की तीव्र आवश्यकता है।

यह तभी संभव है जब हम महिलाओं में उनके अधिकारों, समाज में उनकी भूमिका और स्तर के प्रति जागृति उत्पन्न की जाए। समाज में चेतना के साथ जनजागरण आवश्यक है कि महिलाएं समाज में बराबरी की भागीदार हैं और हर क्षेत्र (सामाजिक-आर्थिक व सांस्कृतिक) में योगदान कर सकती हैं। इसके लिए उनकी मूलभूत समस्याओं के निराकरण हेतु कदम उठाए जाने चाहिए—जैसे महिलाओं का स्वास्थ्य, औसत आयु, शिशु कन्याओं की मृत्युदर पर रोक, महिलाओं की शिक्षा और रोजगार के अवसरों में समानता आदि।

दहेज के कारण आत्महत्या भी हत्या से कम अपराध नहीं है, समाज एवं पुलिस का यह नैतिक दायित्व है कि नवविवाहितों के इस उत्पीड़न को रोकें। बसों में कामकाजी महिलाओं अथवा छात्राओं को जो दुर्व्यवहार सहना पड़ता है—उसका निदान सीटों का आरक्षण अथवा बस स्टाप पर पुलिस के डंडों की व्यवस्था बनाना नहीं है, यह तो प्रारम्भिक शिक्षा, व्यवहार,

(शेष पृष्ठ 34 पर)

पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी असन्तुलनः भविष्य की तबाही

के. एस. चौहान

पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी तंत्र की समस्याओं ने आज विश्व को झकझोर दिया है। पर्यावरण के विनाश और प्रदूषण से विश्व के विकसित एवं विकासशील देश सभी पीड़ित हैं, बल्कि विकसित राष्ट्रों में समस्या कहीं ज्यादा उग्र है। औद्योगिकीकरण की बढ़ती प्रवृत्ति, जनसंख्या के बढ़ते दबाव, कृषि क्षेत्र के विस्तार, वनों के अन्धा-धुन्ध एवं अविवेकी कटान, भूमि में कटाव की समस्या, आणविक गतिविधियों से वायुमण्डल में रेडियोधर्मिता के बढ़ते प्रभाव, उद्योगों से निकले कूड़े-कचरे को नदियों, झीलों में बहा देना आदि कुछ ऐसे कारण हैं जिनसे पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी असन्तुलन में अप्रत्याशित बढ़ोत्तरी हुई है।

पर्यावरण क्या है? मानव और पर्यावरण आपस में कितने अभिन्न हैं? पर्यावरण असन्तुलन कैसे उत्पन्न होता है और मानवीय क्रियाओं को कैसे प्रभावित करता है? आदि कुछ ऐसे महत्वपूर्ण प्रश्न हैं जिनके बारे में उचित ज्ञान पर्यावरण की सुरक्षा के प्रति जागरुकता बढ़ाते हैं।

अनेक विद्वानों ने पर्यावरण का अर्थ उन परिस्थितियों से बताया है जो किसी वस्तु को निकट से घेरे हैं तथा उसे प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। मनुष्य वायु के समुद्र तल पर रहते हुए अपने जीवन की आवश्यकताओं के लिए पर्यावरण पर निर्भर करता है। मनुष्य के भौतिक वातावरण का प्रभाव वायुमण्डल से धरातल एवं जलीय भागों तक ऊर्जा के प्रसार के साथ उन्हें प्रभावित करने के रूप में जुड़ा हुआ है। ऊर्जा एवं पदार्थों की इस प्रकार की अदला-बदली में केवल भौतिक रूप ही नहीं जीवों का अस्तित्व भी रहता है।

पारिस्थितिकी असन्तुलन कब?

मनुष्य जब तक अपनी क्रियाओं का संचालन वातावरण एवं पर्यावरण के अनुकूल करता है, तब तक प्रकृति में अनेक प्रकार की विकृतियां जन्म नहीं ले पातीं। दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि पर्यावरण के प्रतिकूल मनुष्य का आचरण पर्यावरण में विकृतियां पैदा करता है, जैसे शीतकाल में शीतल पेय शरीर के लिए हानिप्रद होते हैं। शरीर उनके साथ अनुकूलन नहीं कर पाता। मनुष्य ने अपने ज्ञान एवं आवश्यकताओं के विस्तार के साथ अपने वातावरण को परिवर्तित करना आरम्भ कर दिया था। अनेक विद्वानों ने मनुष्य के आग के प्रयोग के ज्ञान को पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण के विनाश के रूप में देखा है। मनुष्य ने आदिम अवस्था में रहते हुए आग के द्वारा जंगलों को इसलिए जलाना शुरू कर दिया जिससे जानवरों को भोजन के लिए प्राप्त कर सके। आगे चलकर जब उसे कृषि का ज्ञान हुआ तो भी जंगलों एवं घासों को जलाकर उसने जमीन प्राप्त की। जंगल धीरे-धीरे कम होते गए। उनमें रहने वाले जीव-जन्तुओं का विनाश कुछ आखेट के रूप में हुआ, कुछ जंगलों एवं जलीय भागों के नष्ट हो जाने से स्वतः समाप्त होते गए। मनुष्य ने अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिए समूचे पर्यावरण पर प्रहार कर दिया। यहीं से वायुमण्डल प्रदूषित होता गया और पारिस्थितिकी असन्तुलन की शुरुआत हुई।

प्रदूषण को हम मानवीय क्रियाओं के अवांछित गौण प्रभाव की संज्ञा दे सकते हैं जो कि आज सम्पूर्ण विश्व को प्रभावित कर रहा है। खनिज पदार्थों के अधिकाधिक जलाने, कोयला व पैट्रोलियम के बढ़ते प्रयोग से, उद्योगों की चिमनियों से निकलने वाले धुएं से कार्बनडाई आक्साइड की मात्रा बढ़ रही है। मनुष्य के द्वारा वायुमण्डल का परिवर्तन चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

1. निचले वायुमण्डल की प्राकृतिक गैसों के सन्द्रिण में परिवर्तन।
2. क्षोभ-मण्डल व क्षोभ स्तर के जलवाष्प कणों की मात्रा में परिवर्तन।

3. धरातलीय व सागरीय सतह की विशेषताओं में परिवर्तन।

4. अप्रदूषित वायुमण्डल से भिन्न निचले वायुमण्डल में ऐसी गैसों (प्रदूषण बढ़ाने वाली) से युक्त सूक्ष्म ठोस कणों का पाया जाना।

पर्यावरण प्रदूषण में कार्बन डाइआक्साइड की भूमिका

कार्बन डाइआक्साइड तथा आक्सीजन वायुमण्डल, समुद्रों, मिट्टी, चट्टानी पर्तों तथा जीवमण्डल, सागरों, झीलों, नदियों तथा भूमिगत जल में घुली रहती है। समुद्री सतह और धरातल पर पाई जाने वाली वनस्पति कार्बन डाइआक्साइड का उपयोग करती है जिससे पौधों के टिश्यूज के कार्बोहाइड्रेट कम्पाउण्ड बनते हैं। जो जीव-जन्तु पौधों का उपयोग करते हैं जैविक उपचयन (बायलाजिकल आक्सीडेशन) की प्रक्रिया के रूप में कार्बन डाइआक्साइड को पुनः वायुमण्डल में लौटाते हैं। पेड़-पौधों का आघटित पदार्थ भी कार्बन डाइआक्ससाइड में वृद्धि करता है। पृथ्वी के दीर्घकालीन इतिहास में आक्सीजन व कार्बन डाइआक्साइड पृथ्वी के आन्तरिक भागों से निकाल कर वायुमण्डल में मिलाई जाती रही है। यदि पेड़-पौधों ने कार्बन डाइआक्साइड का विभिन्न सतहों (वायुमण्डल, धरातल, जलीय सतहों) पर उपयोग न किया होता तो पृथ्वी पर कार्बन डाइआक्साइड का रूप शुक्र ग्रह के समान होता।

आधुनिक शताब्दी में औद्योगिक युग से पहले कार्बन डाइआक्साइड की मात्रा .03 प्रतिशत पाई जाती थी। औद्योगिक दशाओं के अन्तर्गत बाहर निकली गैसों ने इसे एक अच्छे प्रकार के खनिज के रूप में जमा कर दिया है। वास्तविक समस्या यह है कि मानव ने हाल में जिस तीव्र गति से हाइड्रोकार्बन ईंधनों का विदोहन एवं जलाने की प्रक्रिया को अपनाया है तथा इनके दहन-उत्पादों को वायुमण्डल में प्रसारित किया है, वायुमण्डलीय गर्मी में बढ़ोतरी होती गई है। एक अनुमान के अनुसार उत्पादित कार्बन डाइआक्साइड की मात्रा का 40 से 50 प्रतिशत वायुमण्डल में मौजूद है। कार्बन डाइआक्साइड की बढ़ी मात्रा का शेष भाग समुद्री जल में घुल गया है। शायद कुछ का प्रयोग पेड़ पौधों की वृद्धि में हुआ हो।

कार्बन डाइआक्साइड के प्रभाव को पर्यावरण के सम्बन्ध में देखने पर ज्ञात होता है कि कार्बनडाइ आक्साइड सूर्यपात की दीर्घ तरंगों का शोषण तथा उत्सर्जन करती है, इसकी अनुपात से अधिक मात्रा सूर्यताप की मात्रा के सोखने के स्तर को बढ़ा देती है। अमेरिका में राष्ट्रीय सामुदायिक तथा वायु मण्डलीय प्रशासन के सर्वे के अनुसार सन् 1860 से 1970 के बीच वायुमण्डलीय तापमान की वृद्धि का अनुमान 2.5° F. तक हो चुकी है। ज्वालामुखी विस्फोटों से स्रावित धूल कणों का प्रभाव भी (तापमान प्रसारण) पर्यावरण पर पड़ा है। मानव क्रियाओं से उत्पन्न धूल कणों (उद्योगों से) ने पर्यावरण में वायुमण्डलीय ताप को प्रभावित किया है जिसके कारण वायुमण्डल की निचली सतह में संवेदी-ताप की मात्रा में कमी हो जाती है। वर्तमान में विद्युत उत्पादन (ईंधन दहन व आणविक ऊर्जा) से प्राप्त ऊर्जा पृथ्वी से प्राप्त दीर्घतरंगी-ऊर्जा का बहुत थोड़ा भाग है। अतः इसका पृथ्वी के ऊर्जा सन्तुलन पर प्रभाव नगण्य ही पाया जाता है।

पारिस्थितिकी असन्तुलन एवं नगरीकरण

पृथ्वी के ताप सन्तुलन के ऊपर बढ़ते नगरीकरण का प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, जहां पर हरे भरे वनस्पति क्षेत्रों का स्थान पत्थर, सीमेन्ट से बने विशाल भवन लेते जा रहे हैं। इसके कारण न केवल धरातलीय सतह की तापीय विशेषताएं प्रभवित होती हैं बल्कि जलीय क्रियाओं से जुड़ी वाष्पीकरण व वाष्पोत्सर्जन क्रिया के तत्व भी प्रभावित होते हैं। नगरीय पर्यावरण में सौर विकिरण के द्वारा सतही तापमान का बढ़ना प्रायः दो कारणों से होता है—पौधों की पत्तियों की अनुपस्थिति के कारण सौर-ऊर्जा की पूरी की पूरी मात्रा नंगे धरातल पर गिरती है। दूसरे शब्दों में पत्तियों की अनुपस्थिति वाष्पोत्सर्जन की अनुपस्थिति को जन्म देती है, जिसमें वायुमण्डल की निचली पर्त ठण्डी की जा सकती है।

छतों तथा सीमेन्ट की बेसमेंट में नमी प्रवेश नहीं कर पाती जिससे आद्र मिट्टी के समान वाष्पीकृत शीतलता भी नहीं हो सकती। तापीय प्रभाव के कारण नगर मरुस्थलीय गर्मी में झुलसने लगते हैं, वैसे भी ढीले रेत या मिट्टी की अपेक्षा ठोस सीमेन्ट, बजरी या पत्थर में गर्मी को संचालित या ग्रहण करने की क्षमता अधिक होती है। ठोस पदार्थों द्वारा त्वरित संचालन से किसी निश्चित समय में ढीले कणों के पदार्थों की अपेक्षा गर्मी शीघ्र बढ़ जाती है।

प्रदूषण के दुष्परिणाम

प्रदूषण का प्रभाव स्थल या वायुमण्डल तक ही सीमित नहीं रहता, वर्तमान में इसके अनेक रूप देखे जा सकते हैं। वायु प्रदूषण, ध्वनि-प्रदूषण, जलीय प्रदूषण, सामाजिक प्रदूषण आदि निरन्तर उग्र होते जा रहे हैं। जनसंख्या के अधिक बढ़ जाने से जहां संसाधनों की स्थिति में असन्तुलन आया है वहीं प्रदूषण में भी वृद्धि हुई है। अधिक जनसंख्या के लिए अधिक आवास, भोजन, उद्योग, परिवहन आदि की आवश्यकताएं अनेक प्रकार के पारिस्थितिकी असन्तुलन को बढ़ाती हैं। संक्षेप में पर्यावरण प्रदूषण एवं पारिस्थितिकी असन्तुलन जन्य दुष्परिणाम निम्नलिखित रूपों में दिखाई देते हैं—

प्रदूषण के कारण विश्व में अनेक भयंकर रोग जैसे अन्धापन, हृदय रोग, स्वांस रोग व नेत्र रोगों में लगातार वृद्धि हो रही है। ऐसा अनुमान है कि औद्योगिक अवशिष्ट के महासागरों में पहुंचने से इनके जलीय जीवों की संख्या में लगभग 30-35 प्रतिशत की कमी आई है। वनों के बेहताशा कटान ने पृथ्वी-ताप में वृद्धि की है तथा जहरीली गैसों की मात्रा में वृद्धि हुई है जिससे वायुमण्डल के सम्पूर्ण तत्व प्रभावित हुए हैं।

नोबेल पुरस्कार विजेता डा. मेलविन काल्विन ने चेतावनी दी है यदि मानव ने शीघ्र ही अपने अविवेकी कार्यों पर रोक नहीं लगाई तो बर्फ के पिघलने से समुद्री जल यू.एस.ए., फ्लोरिडा व जापान के बहुत-से तटवर्ती भागों को डुबो देगा। सागरीय प्रदूषण से अनेक देशों में खाद्यान्न की समस्या उत्पन्न हो जाएगी। वायुमण्डलीय ताप की वृद्धि महत्वपूर्ण ओजोन पर्त को कम कर सकती है जिससे सम्पूर्ण पृथ्वी की जैविक एवं भौतिक विशेषताओं के सम्मुख गहन संकट उत्पन्न हो सकता है। पिछले कुछ वर्षों में वायुमण्डलीय दशाओं में हो रहे परिवर्तनों के कारण वर्षा की मात्रा में कमी आने से सूखा और भुखमरी के प्रभावों को नकारा नहीं जा सकता है।

सुझाव

पर्यावरण-प्रदूषण से मुक्ति पाने के लिए यदि निम्नलिखित सुझावों पर गौर किया जाए तो परिणाम उत्साहजनक अवश्य हो सकते हैं–

वैज्ञानिक प्रगति को समाज की उन्नति के लिए प्रयोग में लाने से पहले उसके विवेकपूर्ण उपयोग पर विचार करना होगा अन्यथा आज की तकनीक कल की अभिशाप ही सिद्ध होगी। जनसंख्या-नियंत्रण पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रण के लिए प्रथम अनिवार्य आवश्यकता है। जैसा कि वर्णित किया जा चुका है जनसंख्या वृद्धि को सभी प्रकार के प्रदूषणों एवं असन्तुलनों का एकमात्र स्रोत भी कहा जा सकता है। वन्य-जीव जन्तुओं एवं हरीतिमा को बचाना होगा। जंगलों के अवैध एवं स्वार्थपूर्ण कटानों को रोकना होगा। वन्य जीवों के शरणस्थलों की सुरक्षा, जीव निष्ठुरता का परित्याग आदि मानवता की रक्षा के समान महत्वपूर्ण मानी जाए। लोगों में शिक्षा प्रसार के माध्यम से इस भावना को प्रेरित किया जाए कि वनस्पति जगत एवं प्राणी जगत एक-दूसरे पर अन्योन्याश्रित हैं, एक का विनाश दूसरे को स्वयं बरबाद कर देगा। रेडियोधर्मी पदार्थों के उपयोग के लिए ऐसी डिवाइस प्रयोग में लाई जाए जिससे उनके कूड़े-करकट को नदियों आदि में फेंकने से रोका जा सके। उद्योग धन्धों से निकलने वाली विभिन्न गैसों (जिनसे प्रदूषण को खतरा हो) को वायुमंडल में जाने से रोका जाए। मुख्यतः कार्बनडाइ आक्साइड को बढ़ने से रोका जाए। भूमि-अपरदन पर नियंत्रण के प्रयास किए जाएं। नगरीकरण के विकास के समय आयोजन को प्राथमिकता देते हुए पर्यावरण सन्तुलन के प्रयास अवश्य किए जाने चाहिए।

अतः मनुष्य को स्वयं अपने तथा अपनी आने वाली संतति के कल्याण के लिए पर्यावरण की सुरक्षा पर अधिक-से-अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। अपने विवेकपूर्ण निर्णयों से जहां स्वयं उसका जीवन सुखमय बन सकता है, सम्पूर्ण पृथ्वी भी एक घर के रूप में दिखाई देगी जिसका कण-कण 'सर्वेभवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः' से गुजांयमान होगा।

जी. एस. एच. (पी. जी.) कालेज,
चांदपुर (बिजनौर)

(पृष्ठ 31 का शेष)

आचरण को ढालने से होगा कि हम मानवीय व्यवहार के अंग के रूप में समझें कि कोई वृद्ध पुरुष या महिला, विकलांग या छोटे बच्चों के साथ स्त्री खड़ी है, तो लड़का हो या लड़की सीट खाली कर दें। सामाजिक मूल्यों का ह्रास इतना हो गया है कि विधवा को मिलने वाली जमीन-जायदाद को परिवार के लोग ही हड़पने की साजिश करते हैं और असहाय को न्याय नहीं मिलता! समाज मूक दर्शक बना रहता है।

उपरोक्त विश्लेषण से विदित होता है कि पुरुष प्रधान समाज में महिलाएं अपनी भूमिका प्रभावशाली ढंग से निभाने में असमर्थ है। उत्पादन प्रक्रिया में उनका योगदान उनके उपभोग से अधिक है। महिलाओं के लिए शैक्षिक तथा रोजगार अवसरों में विद्यमान विभेदों को हटाने की रणनीति के तरीकों पर प्रभावशाली कदम उठाने की आवश्यकता है।

गोविन्द बल्लभ पन्त सामाजिक विज्ञान संस्थान,
3, यमुना इनक्लेव, संगम नगर,
झूंसी, इलाहाबाद (उ. प्र.)

खारे पानी को पेयजल बनाने का अभियान

शैलेश डी. व्यास

राजस्थान के सूखाग्रस्त इलाकों में ललवास नाम के गांव में 70 साल की बूढ़ी प्यारीबाई रहती है। उसे जीने तथा खाना पकाने के लिए पानी लाने के लिए प्रतिदिन 5-6 किलोमीटर दूर जाना पड़ता है। इस तरह का कष्ट झेलने वाली प्यारीबाई कोई अकेली औरत नहीं है। इन इलाकों में अधिकतर महिलाओं को थोड़ा-सा पानी लाने के लिए मीलों दूर जाना पड़ता है, क्योंकि आसपास मिलने वाला खारा पानी पीने लायक नहीं है।

देश के अन्य अनेक भागों में भी चाहे वह सौराष्ट्र के उत्तर में पीठाग्राम, मेला कुड्मुलूर हो या तटवर्ती पोर्ट विक्टर, लगभग ऐसी ही हालत है। इन इलाकों में पानी के विशाल भंडार मौजूद हैं किन्तु खारेपन के कारण यह पानी पीने लायक नहीं है।

किन्तु इन क्षेत्रों में अब वैज्ञानिक उपकरणों से सुसज्जित वाहनों के पहुंच जाने से प्यारीबाई तथा देश के दूसरे हिस्सों में उसी की तरह कष्ट झेलने वाले लोगों को राहत मिल जाएगी। केन्द्रीय लवण एवं समुद्री रसायन अनुसंधान संस्थान के ये वाहन खारे पानी की लवणता दूर करके उसे पीने लायक बना सकते हैं। यह टेक्नोलोजी गुजरात में भावनगर में स्थित इस संस्थान में ही विकसित की गई है।

पानी मनुष्य की सबसे बुनियादी आवश्यकता है, इसलिए लोगों को स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराना सरकार का सर्वप्रथम कर्तव्य है। गुजरात, राजस्थान, उड़ीसा, हरियाणा, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश और कर्नाटक के अनेक क्षेत्रों में पेयजल का निरंतर अभाव बना हुआ है और लोगों को मजबूरन खारा पानी पीना पड़ता है। यह पानी स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। कई स्थानों पर पानी में फ्लुरीन नामक तत्व बहुतायत में होता है। यह पानी सेहत के लिए बहुत खतरनाक है और इससे फ्लुरोसिस नाम की बीमारी होने की भी आशंका रहती है।

पंडित जवाहर लाल नेहरू की दूरदर्शिता के फलस्वरूप आज हमारे देश में अति आधुनिक प्रयोगशालाएं मौजूद हैं, जो इस क्षेत्र में अग्रणी काम कर रही हैं। केन्द्रीय लवण एवं समुद्री रसायन अनुसंधान संस्थान की स्थापना 1955 में हुई थी।

1970 के दशक के प्रारंभिक वर्षों में इस संस्थान ने पानी को लवण रहित बनाने की अनुसंधान परियोजनाओं पर ध्यान दिया क्योंकि खारेपन की प्रक्रिया को रोकना उस समय की सबसे बड़ी आवश्यकता थी। यह समस्या राजस्थान से लेकर तटवर्ती क्षेत्रों और कम वर्षा वाले इलाकों तक फैली थी। इसके कारण जमीन भी धीरे-धीरे अनुपजाऊ बनती जा रही थी। वैज्ञानिकों ने पानी की लवणता समाप्त करने की कई विधियां विकसित कीं।

आर्थिक संभावनाओं को ध्यान में रखते हुए एक संयंत्र की स्थापना की गई, जिसमें 'रिवर्स ओसमोसिस' प्रक्रिया का इस्तेमाल किया गया। इस संयंत्र की विशेषता यह थी कि इसका संचालन बहुत सरल था और इसमें बहुत कम पूंजी की आवश्यकता थी। वैज्ञानिकों ने स्थानीय तौर पर उपलब्ध सेल्युलोस एसीड से उपयोगी ओस्मोटिक मेंबरेन विकसित कर लिए। इसके बाद स्पिरल इनफिगरेशन प्रक्रिया का विकास किया गया जो टुबुलर टेक्नोलोजी की तुलना में कम खर्चीली किन्तु अधिक प्रभावकारी है। 10,000 लीटर प्रतिदिन क्षमता का इस तरह का एक संयंत्र एक अक्तूबर 1980 को गुजरात में अरनेत्र में लगाया गया। रिवर्स ओसमोसिस वाले 15,000 लीटर दैनिक की क्षमता वाले एक संयंत्र पर लगभग 1.20 लाख रुपये की लागत आती है।

सौर स्टिल

एक और लवण रहित करने की परियोजना 'सौर स्टिल' सिद्धांत पर लगाई गई। इसमें आसव बनाने की विधि से पानी को सफल किया जाता है। यह प्रकृति के जलचक्र का ही एक लघु रूप है। यह विधि पानी को लवणरहित बनाने में बहुत उपयोगी है। रासायनिक दृष्टि से शुद्ध किया गया पानी प्रयोगशालाओं में परीक्षण तथा बैटरी चार्ज करने के काम के लिए प्राप्त किया जाता है।

संस्थान ने गुजरात और राजस्थान के गांवों में बड़ी-बड़ी क्षमता वाले सौर स्टिल लगाए हैं। कुछ प्रकाश स्तंभों में भी सौर स्टिल स्थापित किए गए हैं। लक्षद्वीप में 100 लीटर प्रतिदिन की क्षमता वाले अनेक संयंत्र लगाए गए हैं। संस्थान इसके लिए

संगठनों तथा व्यक्तियों को तकनीकी सहायता उपलब्ध कराता है, जिसके फलस्वरूप स्वच्छ पानी के उत्पादन में काफी गति आ गई है।

संस्थान के वैज्ञानिकों ने 'इलेक्ट्रोडायलिसिस' नाम की एक और टेक्नोलोजी भी विकसित की है। यह टेक्नोलोजी 5000 पी. पी. एम. लवणता वाले पानी को साफ करने के लिए इस्तेमाल की जाती है। इस संयंत्र में इंटर पोलिमर में बरेन काम में लाए जाते हैं, जो संस्थान ने अपने यहां विकसित कर लिए हैं।

1963 से, जबसे संस्थान के वैज्ञानिकों ने विधिवत लवणहीनता कार्यक्रम प्रारंभ किया औसत स्तर की आवश्यकताओं के लिए फ्लैश डिस्टिलेशन तकनीक का भी इस्तेमाल किया गया है। 15000 लीटर दैनिक क्षमता के एक संयंत्र के विकास के कई चरणों पर अध्ययन किया गया। यह तीन चरणों वाला संयंत्र था और इसमें बड़े पैमाने पर पानी को लवणरहित बनाने की व्यवस्था थी। संस्थान द्वारा प्राप्त अनुभव से दूरदराज के क्षेत्रों में भी संयंत्र लगाए और संचालित किए जा सकते हैं। यद्यपि उनकी प्रारंभिक लागत अपेक्षाकृत अधिक है।

देश में पानी को लवणरहित बनाने के कुल 11 संयंत्र चल रहे हैं। ये संयंत्र तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, गुजरात, उत्तर प्रदेश तथा लक्षद्वीप में हैं। दूरदराज के इलाकों के लोगों के लाभ के लिए संस्थान ने चलती-फिरती लवण रहित करने वाली संयंत्र सेवा प्रारंभ की है। सरकार ने थाईलैंड को भी इस तरह का एक संयंत्र उपहार में दिया है।

संस्थान ने लवण मुक्ति परियोजनाएं चलाकर समुद्री टेक्नोलोजी में उल्लेखनीय योगदान किया है किन्तु इसकी रचनात्मक भूमिका इस दृष्टि में अधिक महत्वपूर्ण है कि इसने गांवों के गरीबों के आंसू पोंछने में सफलता पाई है। इससे ग्रामीण इलाकों में पीने के पानी की समस्या हल करने में सहायता मिली है। वह दिन दूर नहीं, जब समूचे देश में सभी देशवासियों को पर्याप्त मात्रा में एकदम स्वच्छ पेयजल सुलभ हो जाएगा। □

आया फागुन

जहीर कुरेशी

आया फागुन मास नया,
लेकर कुछ अहसास नया।

फिर बसंत भरने आया,
हर मन में उल्लास नया।

टेसू दहके जंगल में,
लेकर सुर्ख उजास नया।

सरसों के अधरों पर है,
पीला-पीला हास नया।

गांव-शहर, जंगल-जंगल,
है मधुऋतु का रास नया।
सबको ऐसा लगता है—
है कुछ अपने पास नया।
धरती नूतन लगती है,
लगता है आकाश नया।

समीर काटेज, सूर्यनगर,
ग्वालियर 474012, मध्य प्रदेश

बदलाव

डा. सेवा नन्दवाल

ग्राम-सिरपुर में होली का त्यौहार बड़ी धूमधाम से मनाया जाता था। होली के दो दिन पहले चौधरी हरकिशन की चौपाल पर एक बैठक आयोजित की गई। चौधरी साहब ने उपस्थित लोगों से सुझाव आमंत्रित किए।

"गांव के लड़के चाहते हैं कि होली पर हर घर से चंदा इकट्ठा किया जाए"—रामखिलावन ने अपनी बात रखी।

"चंदा किसलिए भैया?"—लखनलाल ने जानना चाहा।

"अरे यही रंग-गुलाल के लिए, थोड़ा बहुत परसाद के लिए"—रामखिलावन ने कहा।

"लेकिन इसके पहले तो चंदा कभी इकट्ठा नहीं किया गया?"—लखनलाल ने पूछा।

"इस बार वे ज्यादा धूमधाम करना चाहते हैं। रंगों के बड़े-बड़े डिरम भरकर रखना चाहते हैं"—रामखिलावन मुस्कराते हुए बोले।

"चंदे की जरूरत नहीं। रंगों का इंतजाम मैं कर दूंगा"—चौधरी ने कहा।

"ठीक है फिर बाकी काम सौंप दो चौधरी"—गणपत कुम्हार ने कहा।

"काम क्या है...सब मिलजुलकर कर लेंगे और क्या?"—चौधरी ने कहा।

"ठीक है लकड़ी का इंतजाम मैं कर दूंगा, जंगल में मैंने दो—एक पेड़ देख रखे हैं"—बजरंगी ने अपनी कुल्हाड़ी हवा में हिलाते हुए कहा।"

"नहीं बजरंगी इस बार जंगल से पेड़ नहीं कटेंगे"—चौधरी हरकिशन ने कहा तो सब लोग चौंककर उनकी तरफ देखने लगे।

"क्या कहा चौधरी?"—नत्थू पंडित ने पूछा जो थोड़ा ऊंचा सुनते थे।

"अब ऐसी गलती, ऐसा जुलुम हमारे गांव में नहीं होगा पंडितजी"—ऊंचे स्वर में चौधरी ने कहा।

"कैसी गलती, कैसा जुलुम बताओ तो?"—धनिया ने पूछा।

"यही पेड़ काटने का। जानते नहीं हो सरकार कितना परचार कर रही है कि पेड़ मत काटो, टी. वी. रेडियो से कितना बोला जाता है कि पेड़ काटने से कितना नुकसान हो रहा है...हवा-पानी बदल रहा है"—चौधरी ने समझाने के स्वर में कहा।

"फिर होली पर लकड़ी कहां से आएगी?"—पोपटलाल ने पूछा।

"लकड़ी कम से कम जलाओ। शहर में भी ऐसा परचार हो रहा है। लड़का रमेश कल ही शहर से आया है"—चौधरी ने कहा।

"चौधरी, शहर में तो लकड़ी खरीदनी पड़ती है इसलिए मना करते होंगे लेकिन यहां तो पूरा का पूरा जंगल हमारे पास है"—गेंदालाल ने तर्क प्रस्तुत किया।

"तुम ठीक कहते हो गेंदा, जंगल हमारे पास है पर तुमने कभी गौर से देखा है कि वह जंगल कितना नंगा होता जा रहा है। रमेश बता रहा था कि जंगल के कटने से परदूषण फैल रहा है, बाढ़ आ रही है"—चौधरी हरकिशन ने समझाने के स्वर में कहा।

"अच्छा ठीक है चौधरी एक पेड़ तो काटने दोगे कि नहीं?"—रामजस ने पूछा।

"नहीं भैया तुम सोचते होगे कि एक पेड़ के काटने से क्या फर्क पड़ता है। सोचो अगर सब लोग ऐसे ही सोचने लगे तो क्या होगा? अरे इतना बड़ा देश है...हर गांव और शहर में जगह-जगह होली जलाई जाती है...एक दिन में लाखों पेड़ नहीं कट जाएंगे?"—चौधरी ने समझाना जारी रखा।

"फिर हम लोग होली नहीं जलाएंगे क्या?"—नाराजगी के स्वर में लच्छु ने कहा।

"नहीं भैया तुम तो बुरा मान गए। मैं होली जलाने के लिए मना नहीं कर रहा हूं। मैं तो यह कह रहा हूं कि जरा-सी खुशी के लिए हरे-भरे पेड़ों को नहीं काटना है...एक बड़ा ठूंठ मैं दे

दूंगा, बाकी सूखी टहनियां, सूखे पत्ते जंगल से बच्चों से मंगवा लेंगे, हमारे गांव में कचरे की भी कमी नहीं है...उसे जलाएंगे तो इस बहाने सफाई भी हो जाएगी''—चौधरी ने समझाया।

''ठीक है चौधरी...''

''हां एक बात और...और उसका पालन बहुत सख्ती से कराना पड़ेगा...गांव के किसी कुएं या तालाब में कोई रंग नहीं घोलेगा''—चौधरी ने हिदायत देते हुए कहा।

''क्यों चौधरी फिर मजा कैसे आएगा?''—लखनलाल ने पूछा।

''पानी की कितनी कमी हो रही है लखन तुम तो जानते हो। भूल गए पिछले साल कितनी किल्लत हुई थी। गांव के सारे कुएं, बावड़ी सूख गए थे...इसलिए इस साल हमें पानी को बेकार नहीं बहाना है...उसे आगे के लिए बचाकर रखना है''—चौधरी हरकिशन ने कहा।

''पर इस साल तो पानी खूब बरसा है। कुएं, बावड़ी, नदी सभी में बहुत पानी दिख रहा है''—रामखिलावन ने बताया।

''हां भैया पर भविष्य किसने देखा है? पता नहीं अगले साल कितना पानी बरसे? इसलिए समझदारी इसी में है कि समय से पहले हम जाग जाएं''—चौधरी ने कहा।

''चौधरी एक बात बताओ इस बार तो बड़ी-बड़ी बातें कर रहे हो...कहां से सीख आए?''—धनिया ने पोपले मुंह से हंसते हुए कहा।

''अरे हम कहां से सीखेंगे, हम तो ठहरे गांव के गंवई, अंगूठाछाप...वही रमेशवा हमें बताता रहता है''—चौधरी हरकिशन ने मुस्कराते हुए कहा।

''तो फिर सभा बरखास करो''—बजरंगी ने कहा।

''हां सभा तो बरखास...मगर हम जो कहें हैं उसका ख्याल सबको रखना पड़ेगा''—खड़े होते हुए चौधरी बोले।

''जे राम जी की चौधरी''—लोग उठ-उठकर जाने लगे।
''जे राम जी की''—चौधरी कहने लगे।

केन्द्रीय विद्यालय

सारनी (जिला-बैतूल) म. प्र. 460447

लेकर बहार आई होली

अवधकिशोर सक्सेना

लेकर बहार आई होली
लाई है प्रेम प्रीत रोली
नव चेतना जागी भू पर
कण-कण में आज विकास मुखर

पागल-सा डोले मलय पवन
फैला सरसों का पीत बसन
गेहूं की बालों में विकास
हैं लाल-लाल फूले पलास

पादप जो चने के मुस्काते
मन सुख से गद्गद् हो जाते
आमों ने बोर किए धारण
करते कल्लौलें पक्षी-गण

हर कली-कली में नया हास
फूलों पर खेल रहा मधुमास
है दिशा-दिशा में हर्ष नाद
नूतन फसलों का नया स्वाद

है स्वच्छ गगन सुन्दर भूतल
वसुधा पर बिछी हरी मखमल
रंगीनी मौसम की सौगात
मधुमय रातें मन हर प्रभात

मस्ती से भरीं सुभग फागें
गाते सब रात कृषक जागे
हो गई तपस्या सफल बड़ी
श्रम की सुषमा ये फसल खड़ी
अब उदर पूर्ति होगी सुख से
छुटकारा मिला बड़े दुख से
खेती वसुधा का जीवन है
कृषकों का सर्वोपरिधन है।

रायजी का मकान
गाड़ी खाने के पास
भाड़ेरी गेट, जिला दतिया (म. प्र.)

कृषि आधारित खाद्य प्रशोधन उद्योग

डा. रोहिणी प्रसाद

भारत कृषि प्रधान देश है और कृषि आधारित उद्योग भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। गांव में बड़े पैमाने पर रोजगार सृजन करने तथा स्वरोजगार को बढ़ावा देने में कृषि आधारित खाद्य प्रशोधन उद्योग मुख्य-भूमिका अदा करते हैं परन्तु विगत चालीस वर्षों में इस उद्योग में भी आमूल परिवर्तन दृष्टिगोचर हुआ है। यहां तक कि अब यह उद्योग बड़े उद्योगपतियों को भी आकर्षित करने लगा है तथा इसका व्यापक विकास होते दिखायी दे रहा है।

कृषि आधारित खाद्य प्रशोधन उद्योग ऐसे उद्योग हैं, जो न्यूनतम विनियोग पर अधिकतम रोजगार का सृजन करते हैं। 20 प्रतिशत लोग इसी क्षेत्र में रोजगाररत हैं, अगर बुनियादी और आधुनिक दोनों प्रकार की खाद्य वस्तुओं का उत्पादन दो से तीन गुना बढ़ा दिया जाये तो इससे होने वाले कच्चे माल के उत्पादन, विपणन, प्रशोधन तथा वितरण पद्धति में बड़े पैमाने पर रोजगार के अवसर प्राप्त होंगे। खाद्य क्षेत्रों के सर्वांगीण विश्लेषण से पता चलता है कि राष्ट्रीय उत्पादन में कृषि-उत्पादनों का मूल्य 44 प्रतिशत है जो कि कृषि स्तर पर कच्चे माल का मूल्य 60681 करोड़ रुपये तथा प्राथमिक, द्वितीयक और तृतीयक क्षेत्र के प्रशोधित फल उत्पादनों का अनुमानित मूल्य 1,11,384 करोड़ रुपये है। इस प्रकार सभी प्रकार के प्रशोधनों का अतिरिक्त मूल्य 50703 करोड़ रुपये है। इस विशाल कृषि खाद्य सम्भावना के बावजूद भारत में केवल 12 प्रतिशत कच्चे माल का उपयोग खाद्य प्रशोधन के क्षेत्र में होता है जबकि विकसित देशों में यह 64 प्रतिशत है।

प्रशोधित खाद्य उद्योग

प्रशोधित खाद्य उद्योग का इतिहास नया है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात से इसका काफी विकास हुआ तथा इसमें विविधता आयी है। आज यह अनेकों तरह की खाद्य वस्तुयें प्रदान करता है। उपभोग के पूर्व किसी भी खाद्य पदार्थ को एक प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। अतः प्रशोधित खाद्य उद्योग के अन्तर्गत निम्न गतिविधियां आती हैं: गेहूं-पिसाई, चावल-कुटाई, तेल-पिराई, गन्ना-उत्पादन व अन्य।

प्रशोधित खाद्य उद्योग को सामान्यतया दो-भागों में विभक्त किया जा सकता है:

(1) बुनियादी और परम्परागत उद्योग, जिसके अन्तर्गत अनाज, दाल, तिलहन, गन्ना तथा अन्य खाद्य सामग्रियों की पिसाई।

(2) सहायक व ऐच्छिक प्रशोधित खाद्य उद्योग, जिसके अन्तर्गत बिस्कुट, बेकरी-उत्पादन, मिठाई, मांस और मछली प्रशोधन, खाद्य और सब्जी प्रशोधन, दुग्ध-उत्पादन और स्टार्च आदि सम्मिलित हैं।

भारत में प्रशोधित खाद्य सामग्री की मांग का जहां तक प्रश्न है, वह प्रारम्भ से ही कम रही है, जिसके कई कारण हैं—जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं—

1. भारतीय उपभोक्ता की खाने की आदत,
2. समापित उत्पादों पर करों और शुल्कों का अधिक भार,
3. आय के उपभोग में इन वस्तुओं को बहुत कम महत्व देना,
4. जागरुकता का अभाव।

विकास दर

प्रशोधित खाद्य उद्योग की विकास दरों का विश्लेषण अत्यन्त जटिल है क्योंकि औद्योगिक उत्पादन के सूचकांक की सहायता से ही उद्योग के विकास दर की जानकारी मिल सकती है। वर्ष 1980-81 तक तथा वर्ष 1987-88 के मध्य खाद्य प्रशोधित उद्योग के विकास की वार्षिक दर 4.8% रही, जबकि उसी अवधि में औद्योगिक उत्पादन का सामान्य सूचकांक 7.6% वार्षिक विकास दर दर्शाता है। यदि वर्ष 1980-81 को आधार वर्ष मान लिया जाए तो संगठित क्षेत्र की उत्पादन इकाइयों में कुछ प्रमुख खाद्य वस्तुओं के उत्पादन की प्रवृत्ति के बारे में विश्लेषण किया जा सकता है जिससे संबंद्ध क्षेत्रों के कार्य के बारे में अधिकतम जानकारी हासिल होगी। कुछ प्रमुख खाद्य वस्तुओं के उत्पादन की प्रवृत्ति को तालिका-1 में दिखाया जा रहा है।

संगठित और असंगठित दोनों ही क्षेत्रों में फल और सब्जी उद्योग की वर्तमान कुल निहित क्षमता लगभग 4 लाख टन है जबकि वास्तविक उत्पादन केवल 1.5 लाख टन है। इस प्रकार वर्तमान उपभोग क्षमता 37.5 प्रतिशत है। संगठित क्षेत्र से संबंद्ध 32 इकाइयों की कुल उत्पादन क्षमता लगभग 1.08

तालिका-1

औद्योगिक उत्पादन के सूचकांक

(आधार वर्ष 1980-81 = 100)

वर्ष	खाद्य उद्योग (वजन 5.33)	सामान्य सूचकांक (वजन 100.00)
1980-81	100.00 ( )	100.00 ( )
81-82	113.5 (13.5)	109.3 (9.3)
82-83	129.5 (14.1)	112.2 (3.2)
83-84	121.1 (– 6.5)	120.4 (6.7)
84-85	120.0 (– 0.9)	130.7 (8.6)
85-86	125.6 (4.7)	142.1 (8.7)
86-87	133.2 (6.1)	155.1 (9.1)
87-88	138.9 (4.3)	167.0 (7.7)
वर्ष 1980-81 और 1987-88 के बीच मिश्रित विकास-दर प्रतिशत में	4.8	7.6

टीप—कोष्टक के समंक पूर्व-वर्ष की तुलना दर्शाती हैं।

लाख है लेकिन 1985 में उनका उत्पादन 54000 टन था। वर्ष 1986-87 में संगठित क्षेत्र की इकाई द्वारा बिस्कुट का उत्पादन 1.37 लाख टन हुआ, जबकि उनकी निहित क्षमता 1.49 लाख टन थी। वर्ष 1975 में बिस्कुट इकाइयों की उत्पादन क्षमता 1.04 लाख टन, जबकि वास्तविक उत्पादन 58300 टन रहा। बिस्कुट उपयोग की क्षमता 1975 के 55.8 प्रतिशत से बढ़कर, 1986-87 में 92.4% हो गयी।

उत्पादन और रोजगार

भारत सरकार द्वारा किए गये एक अध्ययन से पता चलता है, कि मोटे तौर से प्रशोधित खाद्य की लागत का 84 प्रतिशत भाग 'पैकेजिंग', यातायात तथा करों का होता है जबकि कच्चे माल की लागत कुल लागत के 6 प्रतिशत के बराबर की होती है। शहरी जनसंख्या की पूर्ति के लिए ही नहीं अपितु भारत के कृषि और निर्यात क्षेत्रों के विकास में खाद्य प्रशोधन उद्योग द्वारा किये जाने वाले विशाल योगदान को मद्दे नजर रखते हुए, भारत सरकार ने वर्ष 1988 में खाद्य प्रशोधन के लिए एक पृथक मंत्रालय का गठन किया है और इस नये मंत्रालय के गठन के बाद भारत सरकार के पूर्ण समर्थन से सामान्यतः कृषि आधारित और खाद्य उद्योग का विकास होगा, जिससे दो उद्देश्यों की पूर्ति होगी। प्रथमतः कृषि संसाधनों का अधिकतम उपयोग, द्वितीय इस क्षेत्र में रोजगार की सम्भावना में कई गुना वृद्धि होगी। कृषि आधारित तथा खाद्य उद्योग समूह की विभिन्न गतिविधियों के कार्यों के जो आंकड़े प्राप्त हुए हैं, उन्हें तालिका-2 में दिखाया गया है।

प्रशोधित खाद्य उद्योग में 1974-75 की अवधि में रोजगार के मामले में 33 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि इस अवधि में कारखानों की संख्या सामान्यतः पूर्ववत् रही। खाद्य प्रशोधन उद्योग में रोजगार पाने वालों की संख्या 1973-74 में 7 लाख से बढ़कर 84-85 में 10 लाख व्यक्ति हो गई। कारखानों की संख्या 13509 से बढ़कर, 17459 हो गई। उत्पादक पूंजी 851 करोड़ रुपयों से बढ़कर 3540 करोड़ रुपये हो गई। उत्पादन 3408 करोड़ रुपये से बढ़कर, 13869 करोड़ रुपये का हो गया जो इस तथ्य को इंगित करता है कि उत्पादन के क्षेत्र में चार गुना वृद्धि हुई है, जबकि रोजगार के क्षेत्र में डेढ़ गुना की वृद्धि हुई है।

महत्व

खाद्य प्रशोधित उद्योग के महत्व को निम्न चार बिन्दुओं पर विभक्त किया जा सकता है—

(क) भारत का यह उद्योग पूंजी-प्रधान नहीं है और इसमें निम्न मध्यम स्तर की प्रौद्योगिकी का उपयोग होता है। इस प्रकार इस उद्योग से प्रति-इकाई लगायी गई पूंजी से गांवों में अधिक अकुशल लोगों को रोजगार मिलता है, जिससे अधिक उत्पादन होता है।

(ख) फलों और सब्जियों की मांग और पूर्ति में मौसमी भिन्नताएं होती हैं, जिसके परिणामस्वरूप मूल्य स्थिर न रहने की समस्या पैदा होती है। किसान अपना मूल्य किसी भी मूल्य पर बेचने के लिए मजबूर होते हैं, बिचौलिये इसका फायदा उठाते हैं, तथा उत्पादकों के साथ-साथ उपभोक्ताओं का भी शोषण करते हैं, इस प्रकार खाद्य प्रशोधन उद्योग का विकास किसानों और उपभोक्ताओं दोनों को बेहतर अवसर प्रदान करता है।

(ग) ग्रामीण और अर्द्ध-शहरी क्षेत्रों में स्थानीय रूप से उपलब्ध वित्तीय संसाधनों एवं उपक्रमीय प्रतिभाओं के साथ छोटी इकाइयों में उत्पादन किया जा सकता है, क्योंकि उद्योग के लिए विकसित उच्च-स्तरीय अवस्थाओं की भी जरूरत नहीं होती।

(घ) फलों तथा सब्जियों के परिणाम और पैकेजिंग सुविधाओं के पर्याप्त न होने के कारण, कच्चे माल का 30 प्रतिशत भाग नष्ट हो जाता है, जिसे इन उद्योगों से रोका जा सकता है।

संक्षेप में, यह कहा जा सकता है कि कृषि आधारित खाद्य प्रशोधन उद्योग से संबंधित बुनियादी तथा सहायक प्रशोधित खाद्य उद्योगों को बढ़ावा देने से, न केवल कृषि से संबंधित कच्चे

तालिका-2

कृषि आधारित खाद्य प्रशोधन उद्योग समूह के गतिविधियों की जानकारी

क्र.	उद्योग	उत्पादन करोड़ रु. में			रोजगार लाख व्यक्ति में			बिक्री करोड़ में		
		वास्तविक	अस्थायी लक्ष्य			वास्त.	अस्थायी लक्ष्य		वास्त.	अस्थायी लक्ष्य
		87.88	88.89	89.90	87.88	88.89	89.90	87.88	88.89	89.90
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
1.	घानी-तेल	255.14	269.56	318.16	0.84	0.88	0.94	275.07	287.88	320.0
2.	अनाज व दाल प्रशोधन	97.70	111.10	135.55	1.04	1.18	1.30	111.90	125.90	150.3
3.	फल एवं सब्जी प्रशोधन	7.75	9.32	21.00	0.13	0.12	0.20	8.92	9.88	10.0
4.	मधुमक्खी पालन	14.55	17.36	18.13	2.28	2.33	2.35	15.93	21.85	24.0
5.	वनस्पतिरेशा	37.65	52.15	65.00	2.34	2.48	2.49	52.30	63.81	75.0
6.	औषधीय जड़ी-बूटी का संग्रह	1.96	2.86	3.68	0.26	0.38	0.32	2.23	3.09	4.0

माल की खपत होगी, अपितु मौसमी तथा छोटे उद्योगों को बढ़ावा मिलेगा। जहां एक ओर ग्रामीण, अप्रशिक्षित बेरोजगार युवकों को रोजगार प्राप्त होगा, वहीं दूसरी ओर उनकी आय मे वृद्धि होगी जिससे कुछ हद तक समाज की आर्थिक विषमता में कमी आयेगी।

अर्थशास्त्र विभाग
शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय
तिल्दानेवरा, रायपुर, मध्य प्रदेश (493114)

होली

सुलोचना गुप्ता

होली का कुछ अर्थ है।
बिना अर्थ समझे जो खेलो
होली, तो वह व्यर्थ है।
आती यह हर वर्ष है,
लेकिन अपने दिल से पूछो
लाती कितना हर्ष है।
होली पर हम खेले रंग।
एक रंग में सब रंग जाएं,
रहे प्रेम से मिलकर संग।
खूब लगाते रहें अबीर,
नहीं पता चल पाए कोई
है गरीब या बड़ा अमीर
भेद-भाव सब आज भुला दें,,
आपस के सब झगड़ों को हम
होली में बस आज जला दें।
जब हम खेलेंगे यों होली।
सही मायनों में वह होगी,
जन-जीवन की असली होली।

के-84 ए-कालकाजी,
नई दिल्ली-19

"कुरुक्षेत्र" मंगाने का पता

व्यापार व्यवस्थापक
प्रकाशन विभाग
पटियाला हाउस
नई दिल्ली-110001

वार्षिक: 30.00 रु.
द्विवार्षिक: 54.00 रु.
त्रिवार्षिक: 72.00 रु.
चेक/बैंक ड्राफ्ट अथवा मनिआर्डर
व्यापार व्यवस्थापक प्रकाशन विभाग के नाम देय होना चाहिए।

एकता परेड
हम सब, पुरुष, स्त्री और बच्चे हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई, बौद्ध, जैन, पारसी....
पूरब, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण में हजारों की संख्या में, गणतंत्र दिवस समारोह में शामिल होते हैं।
और एक बार फिर प्रदर्शित करते हैं अपनी एकता की भावना।
जाति, धर्म, क्षेत्रीय और भाषायी बंधन तोड़ने के लिये समर्पित करते हैं अपने आपको, और करोड़ों भारतीयों के उत्थान के लिये प्रेरणा देते हैं पूरे राष्ट्र को।
एकता परेड की इस भावना
को सफल बनायें
एक जुट होकर आगे बढ़ें
डीएवीपी 90/751

ग्रामीण विकास में यातायात की भूमिका

सरोज बाला

भारत ग्राम प्रधान देश है। भारत की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है। गांवों के विकास के लिए बहुत-सी विकास योजनाएं बनाई गई हैं परन्तु वे योजनाएं सफल नहीं हो सकीं। जिसका एक कारण गांवों में यातायात के साधनों का समुचित विकास न होना है। कोई भी विकास योजना तब तक सफल नहीं हो सकती जब तक यातायात व्यवस्था ठीक न हो।

भारत की आजादी को 44 साल पूरे होने जा रहे हैं लेकिन बहुत-से ग्रामीणों को आज भी कोसो दूर, एक जगह से दूसरी जगह पर पैदल चलना पड़ रहा है। इससे उनका बहुत-सा समय आने-जाने में नष्ट हो जाता है। यातायात के साधनों की कमी के कुछ कुप्रभाव निम्नलिखित हैं :

शिक्षा पर प्रभाव

यातायात के साधनों का शिक्षा पर बहुत प्रभाव पड़ता है। यह तो मानने योग्य बात है कि सभी गांवों में स्कूल नहीं हैं और कालेज तो गांवों में होने का सवाल ही नहीं है। जिससे विद्यार्थियों को स्कूल व कालेज के लिए बसों व रेलों का सहारा लेना पड़ता है। यदि उन्हें समय पर ये साधन न मिलें तो क्या विद्यार्थी अपनी शिक्षा पा सकता है? इसके साथ-साथ एक गरीब ग्रामीण यदि अपने बच्चे को किसी शहर में ठहराने के बारे में सोचे तो आजकल इस महंगाई के जमाने में वह उसका खर्चा वहन नहीं कर सकता। इनके साथ-साथ एक गरीब मजदूर या किसान खाली समय में कुछ अपने काम में सहायता की आशा भी करता है। शहर में रहने से यह आशा सम्भव नहीं।

कृषि विपणन पर प्रभाव

भारत एक कृषि प्रधान देश है। किसान अपनी पैदावार का सही समय पर सही मूल्य तब प्राप्त कर सकता है जब उसे अपनी पैदावार को मण्डियों या गोदामों में भेजने के लिए साधन उपलब्ध होंगे। किसानों के पास अपना कोई साधन नहीं होता जिससे वह पैदावार को उचित समय पर मण्डियों में भेज कर ऊंचे दाम प्राप्त कर सकें। सब्जी ऐसी पैदावार है जिसे तुरन्त मंडी में न पहुंचाया गया तो किसान को उसके सही दाम नहीं मिल सकते क्योंकि सब्जी खराब हो जाती है। ये सब काम बसों तथा रेलों द्वारा सम्भव है। गांवों से सुबह-शाम शहरों में काफी मात्रा में दूध लाया जाता है जिससे शहरों में दूध की पूर्ति होती है। लेकिन यह सब साईकलों आदि से लाया जाता है। दूध शहरों में देर से पहुंचता है। इस प्रकार दूध के खराब होने तथा न बिकने का डर रहता है।

व्यापार में कमी

यह तो मानने योग्य बात है कि कुछ मामलों में शहर गांव पर आधारित हैं और कुछ मामलों में गांव शहरों पर आधारित हैं। गांव शहरों पर अधिक आधारित हैं। एक छोटी सुई से लेकर बड़ी से बड़ी वस्तु शहरों से गांवों में आती है। किसान को प्रत्येक वस्तु-बीज, खाद तथा दवाईयां, औजार आदि लेने शहरों की ओर दौड़ना पड़ता है।

चिकित्सा सुविधा का अभाव

किसी भी गांव में कोई चिकित्सा सुविधा नहीं है यदि किसी में है तो वहां दवाईयां तथा डाक्टरों का अभाव है। सभी बड़े-बड़े अस्पताल शहरों में ही हैं। बहुत-से ग्रामीणों को समय पर चिकित्सा सुविधा न मिलने के कारण अपने बहुमूल्य जीवन से हाथ धोना पड़ता है क्योंकि गांवों में आने-जाने के पूर्ण साधन नहीं है। यातायात की सुविधा यदि दूर-दराज के गांवों को उपलब्ध करा दी जाए तो अनेक मानव जीवन समय से पहले मौत के मुंह में जाने से बच सकते हैं।

शहरों में जनसंख्या की बढ़ोत्तरी

यातायात की कमी के कारण गांवों से लोग शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं। इससे गांवों की आबादी कम होती जा रही है और शहरों में इतना बोझ बढ़ रहा है कि सरकार शहरों में बुनियादी सुविधाएं प्रदान करने में असमर्थता महसूस कर रही है। आज जो हालत दिल्ली की है वह किसी से छिपी नहीं है। गांवों को कोई बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध नहीं है। उसके साथ-साथ यह बात भी उल्लेखनीय है कि जो व्यक्ति शहरों में

सरकारी, गैर-सरकारी या कोई अपना काम करते हैं वह शहर की भीड़-भाड़ व रहन-सहन की असुविधा, प्रदूषण तथा अन्य बहुत-सी कमियों से बचने के लिए गांव वापिस जाना चाहते हैं परन्तु गांवों में सुबह-शाम आने-जाने की ओर ध्यान नहीं दिया गया।

डाक वितरण में देरी

गांवों में यातायात के साधनों के बिना डाक भी देरी से पहुंचती है जो छोटे-छोटे गांव मुख्य सड़क या रेलवे से दूर हैं वहां पर डाक देर से पहुंचती है क्योंकि बहुत-से गांवों में डाकिए साईकल द्वारा पास के गांवों या कस्बों में जाते हैं वहां से वह डाक ले जाता है। कई बार तो डाकिया डाक नहीं ले जाता है तो गांव की जरूरी डाक लोगों को नहीं मिल पाती है जिससे गांवों के जरूरी काम रुक जाते हैं। यदि प्रत्येक गांव में बसों द्वारा डाक पहुंचाई जाए तो लोगों को डाक समय पर मिल सकेगी।

उपरोक्त आधार पर यह कहा जा सकता है कि यदि हम ग्रामीण जनता को खुशहाल बनाना चाहते हैं तो उसके लिए गांवों में यातायात की समुचित व्यवस्था करनी ही होगी। इस सुविधा के अभाव में, सरकार द्वारा चलाई जाने वाली समस्त योजनाएं अधूरी ही हैं। अतः ग्रामीण विकास के नीति-निर्माताओं को ग्रामीण विकास में यातायात की महत्वपूर्ण भूमिका का अवश्य ध्यान रखना होगा अन्यथा वे अपने उद्देश्य में सफल नहीं हो पाएंगी।

मकान नं. 1221, सेक्टर-11
पंचकुला, (हरियाणा)

लेखकों के लिए

रचना और अन्य प्रकाशनार्थ सामग्री भेजने वालों से अनुरोध है कि रचना भेजते समय वे कृपया इन बातों का ध्यान रखें:—

रचना संक्षिप्त एवं उसकी प्रस्तुति रोचक होनी चाहिए। इसमें उपलब्ध करायी गयी जानकारी अप्रकाशित और प्रमाणित होनी चाहिए।

रचना दो प्रतियों में डबल स्पेस में टाइप की हुई हो जो सात-आठ पृष्ठों से अधिक की नहीं होनी चाहिए। विषय प्रतिपादन में उपशीर्षकों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

रचना के साथ ब्लैक एंड व्हाइट फोटो भी आमंत्रित हैं।

वानिकी एवं इंदिरा आवास योजना कार्यक्रमों के

पंचायत उद्योग सासौल

आर.एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी (डी एन) 98
पूर्व भुगतान के बिना एन.डी.पी.एस.ओ., नई दिल्ली में डाक में डालने की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)-55

RN/7
P & T Regd. No. D (DN
Licenced under U (DN)-5
to post without pre-payment at NDPSO, New Delhi

डा. श्याम सिंह शशि, निदेशक प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और